

अथ बलिदान निषेध।

यन्यकार और प्रकाशक— श्रीवेष्ण्य प्रमहंस जानकीवल्लभदास ( नागर – कवि )



भवस्वार सम्बद्धाः सम्बद्धाः १६६२ (च्

( १२ आना

सर्वावकार स्वरक्षित है।

4929

# \* मूमिका \*

## \*\*\*

यह बलिदान निषेध पुस्तक सम्वत् १९८१ में ३० पृष्ठ तक छपकर किसी कारण से बन्द हो गई थी, फिर सम्वत् १९९० में अन्त तक अपि दी गई। इस पुस्तक में तीन प्रकार के बितयों ( इत्यायों ) का निषेध है। याने देवीबितनिषेध पृष्ठ १ पंक्ति १ से पृष्ठ ७ पंक्ति २१ तक। यज्ञवितिनिषेध पृष्ठ ८ पंक्ति १ से पृष्ठ ७५ पंक्ति ९ तक । श्राद्धवित निषेष पृष्ठ ७५ पंक्ति ११ से पृष्ठ ११९ मंकि ६ तक । धर्मनिरीच्या विषय पृष्ठ ११९ पंक्ति ७ से पृष्ठ २२० पंक्ति १७ तक । बीच बीच में सामान्यता भी मांस भन्नण निषेध है। श्रीर एक निषेध के श्रम्तर्गत दूसरा निषेध भी श्रागया है। विहार बङ्गाल उड़ीसा आदि देशों में मनुष्य, विशेष कर ब्राह्मण इस समय वे प्रयोजन के विचारे दीन निर्वेत पशु पत्ती मछली आदिकों को मार काट खाजाते हैं। ऐसे श्रज्ञानी श्रौर पशुम्बभाव वाले मनुष्यों को मैंने यह पुस्तक लिखी है। यह पुस्तक परिड़त और मूर्क सबके काम योग्य है, वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति इस की शास्त्राधार पर अच्छी तरह मीमांसा ( तर्क) की गई है। यह. पुरतक वैदलवों का आधार, श्रेव शाक्तोंका सुधार श्रोर जिङ्गासुची

#### [ 팮 ]

का गुरु है, पुनः पिडतों का सहोदर भाता और राक्तसों का शत्रु है, इसमें कोई संदेह नहीं।

हिंसकों से बाधित सब जीवों की सबको रज्ञा करना चाहिये, यही धर्म यही ज्ञान यही उत्तम भगवद्भक्ति है स्त्रीर यही मानदान है।

> रह्मन्ति जंतवः सब्बें हिंसकं वाधयंति च। त्रैलोक्यमस्थिलं दृत्वा यत्फलं बेद पारगे ६। तत्फलं कोटि गुणितं लभते ऽहिंसको नरः। सनसा कर्मणा वाचा सब्बेभूत हिते रताः १०। इति लिङ्गपुराण पूर्वभाग अध्याय ५८।

. एकस्मिन् रिचते जीवे त्रैलोक्यं रिचतं भवेत् १७। इति शिवपुराणं हृद्रमंहिता खरड ५ ऋष्याय ५। पृष्ठ ७ पंक्ति ३ से पंक्ति ८ तक भी देखो।

चक्त श्लोकों का अर्थ देवीवित पाखरड माहात्म्य में देखो। मतुष्य को श्रहिंसा ज्ञान का प्रचार श्रवस्य करना चाहिये (गीता १८।६९) क्योंकि इससे संसार का सुधार होता है, वह ज्ञान चाहै मुहजबानी व्याख्यान में हो वा लेख व्याख्यानमें हो। देखिये भारत की खियों का साहस्य श्लीर स्वकर्म, जैसे किंवित्— लेख व्याख्यान याने पुस्तकरूप में, लेखिका श्रीमती हरध्यारी देवीजी, पण्डित श्रीघासीरामजी की पुत्री, मुहल्लावमनपुरी वांम-बरेली । १ विचारकुसुम । २ देवकीवसुदेव विवाह (श्रीकृष्णजन्म) आल्हखरड पहिला भाग । ३ श्रीकृष्ण बालचरित्र आल्ह्खरड द्सराभाग । ४ श्रीकृष्ण गेंदलोला । ५ शङ्कर विवाह । श्रीमती चमेलीकुंचरि वाई जी, परिंडत श्री रामदीनजी का मकान मुहल्ला बमनपुरी वाँसंबरेली ने श्रीकृष्ण सोलहपदी पुस्तक सिखी है। यदि पुरुष, श्चियों के बराबर ही साहस करें तो भारत में बहुत कुछ सुधार हो सक्ता है। श्रीमान बावू रामरेखापसादजी बी० ए० बी० एतः वकीत श्रीवास्तव्य कायस्थ मुकाम शुभङ्करपुर, पोष्ट विशुनदतपुर, जिला मुजफ्फरपुर (बिहार)। श्रीमान् बाबृ इकवालवदादुरजी फरीदपुर, जिला बरेली हाल-हेडमान्टर निरञ्जन पिठलक हाईस्कूल बरेली (यू॰ पी॰)। इनके सरीखा सबको ऋहिंसा से प्रीति करना चाहिये। यह ध्यान उहै कि अहिंसाआदर्श और बामसैथिल-परिचय दोनों पुस्तकें यन्त्रालय से लौट आईं नहीं छपी।

आश्विन कृष्ण ९ सम्वत् १९९२ विकसीय परमहंस जानकीवरुतभदास ( नागर-कवि ) चित्रकूट, जिला बाँदा

# पुस्तक मिलने का पताः-

१ -श्रीमान्!

बाबू रामरे लागसादजी बी. ए., बी. एल. वकील मुहला इसलामपुर, मुजपफरपुर (बिहार)।

२—श्रीमान्!

बाबू इकबालबहादुरजी हैडमास्टर

निरञ्जन पञ्जिक हाईस्कूल वरेली (संयुक्तप्रदेश)।

१- मैनेजर, स्कूल बुकडिपो ऋयोंध्याजी जिला फैजाबाद ( यू॰ पी० )।

# अनुबन्ध चतुष्टय।

(१) विषय—इस विलिदान निषेश में जो देवी देवतायों को लीग पशु बलि देते हैं और आद आदि यज्ञों में भी हत्याकांड की धूर्त ब्राह्मणों ने मुक्र्रेर किया है उसको खंडन है।

(२) प्रयोजन-इस संसार में सकत जीवधारी जीव सुख पूर्वकरहें, किसी को किसी से किसी प्रकार का दुख न पहुँचे इस ग्रन्थ का प्रयोजन है।

(३) सम्बन्ध—यह त्रन्थ सिर्फ अहिसासे सम्बन्ध रखता है।

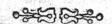
(४) अधिकारी-इस प्रन्थके हिसक, मांसखानेवाले,निदंगी. अद्याल राञ्चस पिशाच अधिकारी हैं।

सुचना—सामान्यता मछली मांस खाना खंडन और श्रांद यञ्च में पशुका काटना खंडन विशेष रूपमें जानना हो तो जो मैं ने " अहिंसा म्रादर्श " और "वाम मैथिल परिचय" नामक दो पुस्तिका लिखीं हैं उनसे जानेंगे। यह दोनों पुस्तिका यन्त्रख हैं।

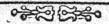
इन दोनों प्रन्थों में " जिस प्रकार इस प्रन्थ में पुस्तक का नाम अध्याय का नंबर इलोक का नंबर साफ साफ वता दिया है (इलोक का नंबर क्लोक के साथ हो साथ है ) इसी प्रकार वताया गया है " मेरे लिखे प्रन्थों से चाहे कम पढ़े हों वा विशेष विद्वान हों सब को समीतां होगा।

फाल्तुन पूर्णिमा संबद् १९८१ विक्रमीय जानकी ब्रह्मस्य (नागर-कवि)

चित्रकृष्ट ।



Printed by G. D. Sinha, Manager, Shri Sita Ram Press, Shri Ayodhya Ji.



#### क्ष हरि ओ३म् क्ष

# चक्रै विख्दान निषेध क्रैं<sup>®</sup>

# श्रीवैष्णव परमहंस जानकीवछम दास (नागर-कवि) कृत + समाहति ।

—**43**k—

#### ॥ श्रीसदाशिव उवाच ॥

"जीवानुकम्पां विज्ञातुं ततो दर्गां सदाशिवः।
पपच्छ परम पोत्या गृढ मेतद्वचो छदा।।
सर्व्वे विष्णुमया जीवास्त्वद्भक्ताश्चक्यं शिवे।
श्रुतंमया तवोद्देशे कुर्युः कामनयावधम्।
महान् सन्देह इति मे ब्रुहि भद्रे छितिश्चितम्।
शङ्करों तद्वचः श्रुत्वा शिव वक् विनिर्गतम्।
भीतात्यन्वं हि ब्रह्मर्वे प्रत्युवाच सदाशिवम्।।

## ॥ श्रीपार्व्वत्युवाच ॥

ये ममार्च्चनिमत्युक्त्वा पाणि हिंसन तत्पराः। तत्पूजनं ममामेध्यं यद्दोषाचद्योगतिः॥ मदर्थे शिव कुर्व्धन्ति तामसा जीवघातनम्। आकल्प कोटि निरचे तेषां वासो न संशयः ॥ मम नाम्नाथवा यज्ञे पद्य हत्यां करोति यः। कापि तिबन्कतिनीस्ति कुम्भीपाक मवाप्नुपात् ॥ दैवे पैत्रे तथात्मार्थे यः कुळीत् प्राणि हिंसनस्। करण कोटि शतं शस्भो रीस्वे स वसेत् ध्रुवस्।। यो मोहान्मानसैर्देहिहत्यां कुर्यात् सदाभिव। एक विश्वति कृत्यक्च तत्त्वस्योनिष्ठा जायते ॥ यज्ञे यज्ञे पशून् इत्वा कुटयीत् शोणित क्ईयस्। स पचेन्नरके तावद् यावल्लोमानि तस्य वै।। हन्ता कर्चा तथोत्सर्ग कर्ता धर्ती तथैव च। तुल्या भवन्ति सर्वे ते भ्रुवं नरक गायिनः॥ ममोद्देशे पशून्हत्वा स रक्तं पात्रसत्सनेत्। यो मूदः स तु प्योरे वसेद् यदि न संशयः॥ देवतान्तरं मन्नाम व्याजेन स्थेच्छया तथा। हत्वा जीवांश्चय यो भक्षेत् नित्यं नरक माप्नुयात्।। यूपे वड ्वा पशून् इत्वा यः कुरयीद्रक्त कर्दमम् । तेन चेत् पाष्यते स्तर्गों नरकं केन गम्यते ॥

स्पदं ष्टा वधे इन्ता कर्ता धर्ता च विकयी।

उत्सर्ग कर्ता जीवानां सर्वेषां नरकं भवेत्।।

मध्यस्थस्य वधायापि प्राणिनां क्रय विकये।

तथा द्रष्टुक्च स्नायां कुंभी पाको भवेद् ध्रुवस्।।

स्वयं कामाश्रयो भृत्वा योऽज्ञानेन विमोहितः।

इन्त्यन्यान् विविधान् जीवान् कर्यान् मन्नाम सङ्कर।

वद्राज्य वंश संपत्ति ज्ञाति दारादि सम्पदास्।

अचिराठ्दे भवेताशो मृतः स नरकं ब्रजेत्।।

देव यज्ञे पितृश्राद्धे तथा माङ्गल्य कर्मणि।

तस्येव नरके वास्ते यः कुर्खाज्ञीव घातनम्।।"

तथा—

'' मद् व्याजिन पश्चन् हत्वा यो भक्षेत् सह वन्धुभिः तद्गात्र लोम संख्याब्दैरसिपत्र वने वसेत्।। आवसोरन्य देवानां नाम्ना च पर कम्मीण। यः संपोष्य पश्चन् हन्यात् सोऽन्यतामिस्तमाप्नुयात्।। पश्चन् हत्वा तथा त्वां मां योऽच्चियन्मांस शोणितेः। तावचन्द्रके वासो यावच्चन्द्र दिवाकरो।। निर्विद्द भस्म तुल्यं तत् वहु द्रव्येण यत् कृतम्। यस्मन् यज्ञे पभो शम्भो जीव हत्या भवेद् ध्रुवम्,॥ यज्ञमारभ्य चेत् शकः कुर्व्याद्वेपश्च घातनम्। स तदाथोनितं गच्छोदितरेपाञ्च का कथा॥

आवयोः प्रजनं मोहाद् वे कुर्व्युमीं स शोणितैः पतन्ति कुम्भीपाके ते भवन्ति पश्चवः पुनः॥ फल कामास्तु वेदोक्तैः पशोरालंभनं मखे । पुनस्तत्तत् फलं भूक्त्वा ये कुर्व्वति पतन्त्यधः॥ व्वर्ग कामोऽश्वमेधं यः करोति निगमाज्ञया। तर्भोगान्ते पतेद्भ्यः स जन्मानि भवार्णवे ॥ ये इताः पश्चवो लोकैरिह स्वार्थेषु कोविदैः। ते परत्र तु तान् इन्द्रस्तथा खड्गेन शङ्कर।। आत्म पुत्र कलत्रादि स संपत्ति कुलेस्लया । यो डरात्मा पशून इन्यादात्भादीन् घातवेत् स तु॥ जानन्ति नो वेद पुराण तत्त्वं ये कम्मेठाः ॥ पण्डित मान युक्ताः । लोकाधमास्ते नस्के पतन्ति कुर्व्वन्ति म्र्लीः पद्य घातनश्चे त्।। चेऽज्ञानिनो मन्द्धियोऽकृतार्था भवे पशुं व्रन्ति न धर्मशास्त्रम्। **जानन्ति नाकं नरकं न मुक्ति** गच्छन्ति धोर नरकं नरास्ते ॥ युखा अकाष्णी न विदन्ति शाका न धर्मी । मार्ग परमार्थ तत्त्वम् ।

कर्मश्रूरा, इत्यमरः ।
 नंअहिसा और उपनिषत, इति ग्रब्द काल्पद्रमधर्मशब्दान्तर्गति-

### षापं न पुण्यं पशु घातका वे पूर्योदवासा भवतीह तेषाम्।।

मेदिनी, से, १६ का वचन । धर्म के १० अंग यथा :-

ब्रह्मचर्थेण सत्येन तपसा च प्रवर्तते। दानेन नियमे नापि क्षमा शौचेन ब्रह्मभा अहिंसया स शान्या च ब्रस्ते ये नापि वर्तते। एते ईश भिरङ्गो स्तु धर्ममेय प्रस्चयेत्॥ इति शब्दकल्पद्रुम धर्मशब्दान्तर्गत पाद्मभूमि खंड का बचन।

अहिंसा सत्यमस्तेयं दानं क्षांतिर्दमः शमः। अकार्पण्यं च शौवं च तपश्च रजनीचर १। द्शांगी राक्षस श्रेष्ठ धर्मी सी सार्वदर्षिकः। ब्राह्मणस्मापि विह्ता चातुराश्रम्य करूपना २। इति वामनपुरास्

अध्याय १४।

गृहस्य के व्यर्थकर्म यथा :-

ष्ट्यादनं ष्ट्या दानं वृथा च पशु मारखम्। न कर्तस्यं गृहस्थे न वृथादार परिग्रहः ४१। वृथादनान्नित्य हानिष्ट्रंथा दानाद्यनस्यः। वृथा पशुमः प्राप्नोति पातकं नरकार्थियत् ४२। संतत्याहानिरश्लाच्या वर्णशंकर तोभयम्। भेतत्यं च भवेलोकेवृथादार परिगृहात् ४३। परस्वे परदारेषु न कार्यान्बुद्धिहत्तमेः। परस्वं नरकार्येव परदाराश्च मृतवे ४४। ने श्वेत्परिख्यं नम्नांन सं भाषेततस्करान्। उद्वयादर्शनं स्पर्शे सं भाषां च विवर्जयेत् ४५। नैकास्तवे तथास्थेवं सोदर्या पर-जायया। तथा सापन्त मानुश्च तथा स्वदृहित्विप ४६। न च सायोत वै नम्नो न शयीत कदाचन्। दिग्वास सोऽपि न तथा परिश्रमण-मिक्यते ४७। इति वामनपुराण अध्याय १४। जीवानु कम्पां न विद्दान्त यूवा
श्रान्ताञ्च चेऽसत्यियनो न धर्माम् ।
स्मांची भवे प्राणि वधं न कुट्यु स्ते यान्ति मन्यीः खलु रौरवाख्यम् ॥
ततस्तु खलु जन्तूनां घातनं नो करिष्यति ।
श्रद्धात्मा धर्म्बान् ज्ञानी प्राणान्ते नैव मानवः ॥
यदीच्छेदात्मनः क्षे मं त्यक्त् वा ज्ञानं तदानरः ।
जीवान् कानपि नो हन्यात् सङ्कटापन्न एवचेत् ॥
सम्पतौ च विपचौ वा पर ठोकेच्छुकः पुमान् ।
कदाचित् प्राणिनो इत्यां न कुट्यांक्तत्वित् सुधीः ॥

परदार पुरुष की गति यथा :—

पर्व मैथुनिन: पापाः परदार रताश्चये । तेविह ततां क्रांत्रामाढिंगं ते च शात्मलीम् ३० । इति वामनपुराण अध्याय १२ ।

राजाको किसोकी कन्याके दृषित करनेके विषयमें यथा :—

प्रनर्भूपतयो ये च कन्या विध्वंसकाश्चये । तद्गर्भस्रावक्रवश्च क्रमोन्मक्षेत्रिपपीळकाः ३५ । इति वामनपुराण अध्याय १२ ।

परस्त्रो स्मरण से पाप ळगता है यथा :—

परस्त्रो स्मरणे पापं किं पुनर्दर्शनादिवु ७० । इति आदि पुराण अध्याय १८ ।

परदार प्रसंग पाप है—देवी भागवत स्कंघ ६ अध्याय २४ स्टोक ४६ देखो। मानवो यः परत्रे ह तर्नुमिच्छेत् सदात्रिव।
सर्व्य विष्णुमयत्वे न न कुर्य्यात् प्राणिनां वयम्।।
वयाद्रक्षति यो मत्यो जीवान् तत्वत्र धर्म्मवित्।
किं पुण्यं तस्य वक्ष्ये ऽहं ब्रह्माण्डं स तु रक्षति॥
यो रक्षेत् घातनात् शम्भो जीव मात्र दया परः।
कृष्ण प्रियतमो नित्यं सर्व्य रक्षां करोति सः॥
एकस्मिन् रक्षिते जीवे त्रं लोक्यं तेन रक्षितम्।
वधात् शक्कर व येन तस्माद्रक्षेत्र घातयेत्॥"

तथा-

"पद्य हिंसा विधिर्यत्र पुराणे निगमे तथा।

उक्तो रजस्तयोभ्यां स केवलं तमसापि वा॥

नरक स्वर्ग सेवार्थ संसाराय प्रवर्तितः।

यतस्तत् कर्म्म भोगेन गमनागमनं भवेत्॥

सत्येन सास्वतग्रन्थे स विधिनैंव शक्तरः।

पर्वतितो निष्टत्तिस्तु यत्रापि सात्विकी किया॥

एवं नाना विधं कर्म्म पशोरालभनादिकम्।

कामाशयः फलाकाङ्की कृत्वाज्ञानेन मानवः॥

पञ्चाञ्जानासिनाच्छित्वा आन्त्याशांतामसी सदा

यमभीतिहरं भक्त्या यदि गोविन्दमाश्रयेत्॥"

इति शब्दकरपद्रम बल्टिः शब्दान्तरगत पाद्योत्तर स्वल्ड १०४॥

१०५ अध्याय का वचन ।

(ननु ''या हिस्यात् सर्वा अतानि'' ''अहिसापरमो बन्मैः।'' इत्यादि वचनान कर्च ब्येन सर्व्या हिंसा कथं तहि हिंसा पवित्तः ग्रुभाइष्ट जनकर्त्वे न चाले पूर्विष्टा असोऽत्रोच्यते । अथ वैध हिसा विचारः । भा हिंस्यात् सक्वी भूतानि, इत्यत्र सर्व्य शब्दस्य व्याप-कार्थ परतया एतदि वि मनुहाङ्च 'दायन्यं श्वेत माहमेत, इत्यादि विधिविषया माप्ते रगला वेधारितिक विषयत्वं सर्वाः सर्व्वीण छन्द्रि वेट्यनेन तत्पदं विद्धम्। यद्पि नाना दर्शन टीका कृष्टिभवीचरणीत मिधीस्तन्वकौशुचास् अभिहतं न च भा हिंस्यान् संन्धी जुतानि, इति सामान्य श्रास्त्रं विशेष शास्त्रेण अधियोपीय' पशुमालभेत, इत्यनेच बाध्येत इति बाच्यं विसोधा-भावात्। विरोधे हि वलीयसा दुर्वालं वाध्यते। न चास्ति विरोदः भिन विषयत्वात् । तथाहि 'मा हिंस्यात् इति निषेधेन हिसायाः अनर्थ हेतु भावो झाय्यते च पुनरक्रवर्थःवगिष । न चानर्थ हेतु त्वकत् पकार कत्वयोः कव्चिद्स्ति विरोधः। दिसा हि पुरुषस्य दोष मावस्यित कतोक्चोप करिष्यतीत्यन्तेन तद्य सांख्य नथे। मीं मांसक मते तु विरोध एवं तथा हि गरुनये न खु सर्व भूत हिंसाऽभाव विषयकं कार्य्य इति निषेध विध्यर्थस्य बाधं विना अग्निषोमीय पश्वालम्भन विषयकंकार्य्य मितिभाव विध्यर्थ उपपद्यते। भट्टनये तुं अङ्गे यथा तथास्तु । न च मुख्य पशुयागे पुरुषार्थक पशु हिसन स्यार्थ साधनत्वं अनर्थसाधनत्वञ्चोप पद्यते विरोधात् । वस्तु तस्तु अङ्गेपि विरोघोऽस्थेव कुतो विधेरेष स्थावो यः स्वेविषय स्य साक्षात्वरमपरया वा पुरुषार्थे साधनत्वमवगमयति अन्यथाङ्गा-

नां प्रधानोपकार कत्वमपि नाङ्गीकियेत। अर्थ साधनत्वं वस्त्वद् निष्टाननुबन्धीष्ट साधनत्वं अन्धं साधनत्वं वस्त्वद्निष्ट साधनत्वं न चानयोरकेत्र समावेश इति। अत्तप्तीकं 'तस्माद् यक्ने वधोऽन्वयः, इति। नन्वेवं 'द्येनेनाभिचरन् यजेत, इत्यत्र द्येनस्य शत्रु वध कपेष्ट साधनत्वमवगतं 'अभिचारो मूल कर्मं च।, ११।६३। इति मनुना उपपातक गण मध्ये पठात् अनिष्ट साधनत्वमवगत्त् । तदेतत्कथम्रपप चतामितिचेन्मैवं 'आततायिनमायान्तं हन्या देवा विचारयन्।, ८।३५०। इत्येक वाक्यत्या आततायिस्थले इष्ट साधनत्वं अनाततायिस्थले तृपपातकत्वेन वलवदिनष्ट साधनत्व-मिल्य विरोध एव॥" इति शब्दकलपद्रुम वलिदानं शब्दान्तरगत तिथितत्व का वचन।

सब प्राणियों में विष्णु परिवूर्ण हैं यथा:— सर्व भूतमयों विष्णुः परिपूर्णः सनातनः ३३। अध्याय १६। सर्वविश्वात्मकं विष्णुं सर्व लोकेक कारणस् ३४। अध्याय ३२। इति नारदीयपुराण पूर्व खण्डाः

आसीनः सर्व देहेख ४९। इति वामन पुराण अध्याय ९४। हरिः सर्वोष्ठ भूतेष्ठ भगवानास्त ईश्वरः। इति भूतानि मनसा कामैस्तैः साधु मानयं त् ३२। इति भागवत स्कन्य ७ अध्याय ७ ।\*

। दिनो ना व्विष्ण्णऽउत्त वा पृथिक्याम् हो वा विष्ण्णऽउरो

रन्तरिक्षात् १९।

इति यजुर्वेद अध्याय ५।

जो यह में पशु हत्या करते हैं वे वड़े निर्द्यी होते हैं और नरकों में जाते हैं, वही नरकोंसे निकल पिशाच राह्मसादि योनियोंमें जाते हैं। पाखण्डी धृतं ब्राह्मण पण्डितों ने हिंसा बाला यह चलाया है। वेदों ने कहीं नहीं कहा जितने कमें हैं सब हिंसा रहित कहें गये हैं। घेदशाखों में धृतंब्राह्मणों ने हिंसा मिलाई है वे लोग लोभादि से भस्यामक्ष्व खाते हैं, देवी देवतोंके लिये तंबादि प्रन्थोंमें इन्हीं लोगों ने पशु विलक्षी व्यवस्था देडाली है, इससे सक्तानामिलंबी सज्जनलोग इनसे खुवा लूतादिका व्यवहार न करें। अब सर्वथा यहमें पशु विलिध करते हैं यथा—

यज्ञ शब्द का अर्थ-अहिंसा हीता है थया:--

अमरकोष द्वितीय कांड सातवें ब्रह्मवर्ग के श्लोक १५ में लिखा है कि—यज्ञः सबोऽध्वरो अर्थात् यज्ञ कां दूसरा नाम अध्वर है पुनः

<sup>\*</sup> रहोकोंका नम्बर रहोकोंके लाध हो लाध है। यदि मूलप्रन्थ में रहोक वा अध्याय अपने स्थान पर न मिले तो दश पांच रहोक वा दोचार अध्याय मागे पीछे नज़र फेर लेंगे।

यही वेदांग नैधंड अध्याय ३ खंड१७ में लिखा है और अध्वर शब्द कां अर्थ अिंसा होता है, क्योंकि वेदांग निफक मैगम कांड (पूर्वपट्क) अध्याय १ पाद ३ खंड ८ में यह लिखा है कि— अध्वरहित यज्ञनाम ध्वरितिहिंसा। कर्मीतः मितिष्धः अर्थात् यज्ञ का नाम अध्वर है और जो हिसा का नियेध करें उसे अध्वर कहते हैं।

वेदमें भी अध्वर का अर्थ अहिंसा लिखा है यथा :—

अम्बयो यन्त्रध्वभिर्जामयो अध्वरीयताम्। पुश्चतीमधुना पयः १।

इति अधवंवेद कांड १ अनुवाक १ स्क ४।

अर्थ— (अम्बयः) पानेयोग्य मातायं और (जामयः) मिळकर भोजन करते हारी, बहिने [बा कुल स्त्रियां] (मधना) मधुके साथ (पयः) दूधको (पृञ्चतोः) मिळाती दुई(अध्वरीय स्थान हेसा न करने हारेयजमानों के (अध्वभिः) सन्मार्गोंसे (यन्ति सुनिः। १।

नोट— क्या अब कोई विद्वान ऐर इति स्कन्ध ६ अध्याय १३ ।

लिये अध्वर् शब्द का प्रयोग हो उसमें र<del>वे</del>

यज—देव वृज्ञा सङ्घति करण दानेषु, यं होक १३३ और महाभारत नी देखो —। देवीभागवत /स्काः।

जिसमें हिंसा हो वह सत्य सत्य नहीं य पीडयन् २३८। कार हो वह असत्य भी सत्य है यथा— इति मनुस्मृति अध्याय ध्रा यज्ञ में पशु मारने वाला पिशाच चांडाल और महापापी होता है यथाः—

> चक्रु ग्रुप्टीश इलाती हाहेति जन दुर्वचः । पिशाचोऽयं महापापी करूर कमी दिजा कृतिः ३४। यत्स्त्रयं र्व्यस्ततं हेतुस्रचतः कुल पांसनः। धिक् चांडाल किमेतचे पाप कर्म चिकीर्षितम् ३५। \* इति हक्षंघ ७ अध्याय १६।

अपनी देह पृष्ट को पर देह इत करते हैं वे वेदिचारीहैं यथाः— रागीणां रोचनार्थाय नोदनेयं विचारय । आत्म देहस्य रक्षार्थं पर देह निक्क तनम् ४० । इति स्कंध ७ अध्याय १६ ।

हिंसा करने वाला रौरवनरक में जाता है यथाः— रौरवेनाम नरके सर्व सत्व भयावहे । इह लोकेऽमनायेतु हिंसिता जंतवः पुरा १० ।

<sup>\*</sup> दुखी की रक्षा करना यह से उयादा है और भयभीत की रक्षा करना इस से भी अधिक है यथा—आर्तस्य रक्षणे पुण्यं यहाधिक मुदाहतम् । भयत्रस्त दोनस्य विशेष फलइं स्मृतम् ५७ — इति देवी भागवत स्कंध ३ अध्याय १५।

जो पाखंडी यज्ञ में पशु मारते हैं वह विशसन नरक में जाते हैं स्थाः—

> चे वंभावंभ यजेषु पश्चन्यनंति नराधमाः। तानश्रव्मन्यमभटा नरके वैशसे तदा ४७। निपात्य पीडत्यं त्येवकशाधातेषुरासरैः ४८। इति स्कन्ध ८ अध्याय २२।

जो पुरुष या स्त्री देवी देवतीं को मनुष्य वा पशुका बिछ देते हैं भीर मांस खाते हैं वे नरकों में उन्हीं जानवरों से खाये जाते हैं यथाः—

धे वै नरा यजंत्यन्त्रं नर मेधेन मोहिताः।
स्त्रियोऽपि वा नर पद्यं खादंत्यत्र महास्त्रने १०।
पत्रवो निहितास्ते तु यम सद्यनि संगताः।
सैनिका इव ते सर्वे विदर्थसित धारया ११।
अक्पिवन्ति नृत्यंति गायन्ति बहुधा सुने।
यथेह मांस भोक्तारः पुरुषा दादुरासदा १२।
इति स्कन्य ८ अध्याय २३।

जो जीवों का घात करते हैं वे असिपत्र नरक में वास करते हैं यथाः— छिनत्ति जीवं खंगेन दयाहीनः सदाहणः । असिपत्रे वसेन्सोपि याविद्दाञ्चतुर्दश २ ।

इति स्कन्ध ९ अध्याय ३४।

## मत्स्यपुराण ।

ब्राह्मण को जपयञ्च करना चाहिये यथा :— आरम्भ यज्ञः क्षत्रस्य हिवर्यज्ञा विद्यः स्मृताः । परिचार यज्ञा सूद्राञ्च जप यज्ञाञ्च ब्राह्मणाः ५० । इति अध्याय १४२ ।

यज्ञ की हिंसा अहिंसा नहीं कहाती किन्तु अधर्म कहाती हैं इससे यज्ञ में हिंसा न करना चाहिये यथा:—

अधर्मी बलवानेष हिसा धर्मेप्तया तव।
नवः पश्चविधिस्त्व स्टस्तंब यज्ञे स्टरोत्तम १२।
अधर्मी धर्मधाताय प्रारूधः पश्च भिस्त्वया।
नायं धर्मोद्यधर्मीऽयं न हिसा धर्म बच्यते।
आगमेन भवान् धर्म प्रकरोतु यदीच्छति १३।
तस्मान्न हिसा यज्ञे स्याद्यहुक्त मृषिभिः पुरा।
ऋषि कोटि सहस्नाणि स्वैस्तपोमिदिंब गताः २९।

तस्यांत्र हिंसा यज्ञञ्च प्रशंसन्ति महर्षयः। उज्लोमूळं फळं शाकमुद्यात्रं तपोधनाः ३०। इति अध्याय १४३।

### वामनपुराण।

मनुष्य अपने ही प्राण को त्यागना अङ्गीकार करले परन्तु पर की हिंसान करें यथाः—

> वरं प्राणास्त्याज्या न वत पर हिंसात्विभमता। वरं मौनं कार्वं न च वचनसक्तः यद् नृतम्। वरं क्लीवैभीव्यं न च पर कलत्राभि गमनं। वरं भिक्षार्थि त्यं न च पर धनानां हि हरणम् २९। इति अध्याय ५९।

मृद् लोग माया जाल में पड़नेसे मध्यामध्य पेयापेय जीवघात कार्याकार्य गम्यागम्य का स्वरूप कुछ नहीं जानते यथा:—

> भक्ष्याभक्ष्यञ्च लादेत पेयापेयञ्च तित्पवेत् ८८। जीवानि चैव सततं घातितानि ततस्ततः। कार्योकार्यं न जानीते वाच्यावाच्यन्तयेति च ८९। गम्यागम्यं न जानाति गाया जाळेन मोहितः ९०। इति अध्याय १२५।

मनुष्य को अभस्य विलक्षित विलक्षित है, वन श्राख में भी मांस खाना अभस्य ही है भिष्टा मांसादि जो मल है वह किसा मंत्र से भी शुद्ध नहीं हो सकते यथाः—

अभक्ष्यश्चीव वर्जितस् १३५।

इति अध्याय १२५।

## वाराह युराण।

हिंसक ? दुष्ट (सरपादि) योनियों में जन्म केते हैं यथाः— हिंसका दुष्ट योनिजाः ९५ ।

इति अध्याय १२६ ।

मांस कानेवाला प्रेत होता है यथाः—

बृथा मांस रतो निखं स चमे तोऽभिजायते ४५।

इति अध्याय १७४।

जो किसी की हिंसा नहीं करता वही पापी से छूटता है यथा:-

अहिसः सर्वमृतेषु तृष्णा क्रोध विवर्जितः ।

श्चभ न्यायः सदायञ्च स पापेभ्यः प्रमुच्यते ३३ ।

इति अध्याय २१०।

## ब्रह्म पुराण।

जीवों के मारने वाले यमलोक मार्ग में राझकों से खाए जाते हैं यथाः—

> घातयन्ति च ये जंतूंस्ताड्यन्ति निरागसः ८९। राक्षसैर्थक्ष्यमाणास्ते यांति याम्य पथं नराः ९०। इति अध्याय १०५।

# नारदीय पुराण।

किसी को दुःख न देना ही सब घर्मों से वड़ा घर्म है यथाः— आनृशंस्यं परो घर्मः \* क्षमा च परमं वलस् । आत्मज्ञानं परं ज्ञानं सत्यं हि परमं हितम् ४९ । इति पूर्व खण्ड अध्याय ६० ।

देवी की पूजा फल फूल समादि से होती है यथा:—

घृतं च शर्करा दुग्धमपूर्वं कदली फलम् । शौद्रं गुडं नारिकेल फलं लाजा तिलं दिघ ८५ । पृथुकं चणकं मुद्गपायमं च निवेदयेत्।

\* महाभारत वनपर्व अध्याय ३१३ स्होक ७६ और शुक्त नी वि अध्याय १ स्होक १५८ में भी ऐसा ही है।

# कामेश्वर्यादि शक्तीनां सर्वासामिप चोदितम् ८६। \* इति पूर्व खण्ड अध्याय ९०।

\* जो देवी देवतों को पशुकार के खाने को देते हैं उस की हत्या मनुष्य को लगती है और परलोक में दुखों को प्राप्त होतेहें देवी आदिकों को फल नहीं मिलता क्यों कि वह पूर्वपुष्य से अपने सुख को भोगते हैं और धर्मशास्त्र मनुष्यों कोही बनाहै न कि देवता, पशु, पक्षियों को क्यों कि मानव धर्मशास्त्र उस का नाम हो है।

वाम मैथिल परिचय से उद्दधृत यथाः—

दुर्गा मंदिर की जहां बनवाते नर जोय । वहां कसाई भवन की नहीं ज़करत होय। नहीं ज़करत होय मनुज तहाँ काटें खस्सी। घनते वहीं चमार खाल खेंचत कस रस्सी। जो नर खाते मांस उन्हों को नर्क! न खर्गा। तह को करें कसाइ जहां है मंदिर दुर्गा॥ बकरी का बचा दुर्गों से कहता है कि:—

भुवनेश्वरि सज्ञान त् अज्ञ नहीं छवलेश।
वकरों के तन खात फिर क्यों मछ भरे विशेष।
क्यों मछ भरे विशेष चाम चर्ची रज हड्डी।
मूत्र मांस गू वीर्य खात तू बन के वड्डी।
किसने देवी कही तुझे डम्मन जग भरकी।
हम वकरी के बाल जान क्यों छेवे परकी॥

अर्थ—संसार में जितनी सब शक्तियां हैं, उनको घी, शक्कर, दूध, युवा, केला,फल, गन्ने का रस, गुड़, नारियल, लाई, तिल, दही, चिउड़ा, चना, मूंग, खोर, (दूध भात) का भोग लगावे। सस्सी (वकरा) आदि पशुओं की हत्या नकरें क्योंकि "जीवहिसामहत्पापं"।

नीट :- दुर्गा की विल देने दिलाने का पाप लगता है यथा-

वित्रानेन विभोन्द दुर्गा प्रीतिसंवेन्तृणाम्। हिंसा जन्यञ्च पापञ्च कभते नात्र संशयः। उत्सर्ग कर्ता दाता चन्छेत्ता पोष्टा च रक्षकः। अप्र पश्चान्त्रिरोद्धा च सप्तै ते वध भागिनः। योऽयं हन्ति स्र तं हन्ति चेति वेदोक्त मेव च॥

इति शब्द करुपद्रुम विश्वव्दान्तरगत वसवैवर्तपुराण प्रकृति खण्ड अध्याय ६२ का वचन ।

अर्थ—हे विभेन्द्र ! दुर्गा की प्रीति के अर्थ जो मनुष्य (पशु) विल देते हैं उनकी पशु मारने का पाप (हत्या) लगता है इसमें कोई संशय नहीं। वेचनेवाला, लेनेवाला, काटनेवाला, पुष्टकरने वाला, रक्षा करनेवाला, आगे रोकनेवाला, और पीछे रोकनेवाला ये सात मनुष्य उस पशु के मारनेवाले कहाते हैं, यह वेद का कहना है कि जो जिसको मारता है, वह उसको मारता है, अर्थात् जो विधि वा वे विधि के पशु पिक्षयों को मारते हैं वे परलोक में उन्हीं पशु पिक्षयों से मारे जाते हैं, देखो नीचे ७।८ स्होक।

#### भागवत।

जीवों के दुख देने पाले को यदि राजा वध करै तो अबध ही हैं, अर्थात् कोई पाप नहीं है यथा:—

> पुमान्योपिदुत क्लीव आत्म संभावनोऽयमः । भूतेषु निरनुकोशो नृपाणां तद्वधोऽवधः २६ । इति स्कन्ध ४ अध्याय १७ ।

जो यहां में पहाओं को काटते हैं वही पछा नरकीं में जाकर उसे खाते हैं और यह में मांस खाते वाला भी नरक को जाता है पुनः यह में मरा हुआ पशु भी नरकमें जाता है क्योंकि दुख नरकों में ही दिया जाता है यथा:-

> भो भो मजापते राजन् पश्चन पश्चत्वयाध्वरे । संज्ञापिताञ्जीव सङ्घाजिष्ट्रिणेन सहस्रशः ७ । एते त्वां संप्रतीक्षन्ते स्मरन्तो वैश्वसं तव । संपरेतमयः इटैश्छिन्दन्त्युत्थितमन्यवः ८ । इति स्कन्ध ४ अध्योय २५ ।

यज्ञ में पशु स काटे— जो पाखंड़ी यज्ञ में पशु काटते हैं वे नरकों में अनेक दुख पाते हैं यथा:—

वे त्विह वै दास्भिकादम्भ यज्ञेषु पशून विश्वसन्ति-

तान मुिष्प छोके वैशसे नरके पतितान् निरय पतयोघातयित्वा विश्वसंति २५ । ये त्विह वै पुरुषा पुरुष मेधेन याजन्ते याइच स्त्रियो चपशून् खदनित तांइचते पशव इह निहता यम सदने पातयन्तो रक्षो गणाः सैनिकाइव स्वधितिना ऽवदायासक् पिवन्ति च्लन्ति च गायन्ति च हृष्यमाणा यथेह पुरुषादाः ३१ ।

इति स्कन्ध ५ अध्याय २६।

जो दुष्ट अपने में अभिान रखते हैं और पशुओं को खाते हैं मरने के बाद उन्हें वही पशु नरकों में खाते हैं यथाः—

> ये त्वनेवं विदोऽ सन्तः स्तव्धाः सदाभि मानिनः । पञ्चन हुइयन्ति विस्तव्धाः मे त्य खादन्ति ते चतान् १४ । इति स्वरूध ११ अध्याय ५ ।

#### महाभारत ।

जिनकी संसार में कोई मरयादा नहीं है उन मूढ़ नास्तिक धूर्त धन के लोभो बाह्मणों ने यज्ञ में हिसा वर्णन की है और चेद से बाहर पशुओं को मारते हैं वेदों ने कहीं भी हिंसा नहीं कहा किंतु मतु ने सब कर्म हिंसा रहित कहें हैं यथा:—

> छुन्धेर्बिच परेब्र ह्मन्नास्तिकैः सं प्रवर्तितम् । वेद् वादान विज्ञाय सत्याभास मिवानृतम् ६ । इति शांतिपर्व मोक्षधर्म मध्याय ९०।

अव्यवस्थित नयोदिशिम् हैनोस्तिकैन्देः । संश्वादम्बित्यकोदिसा समतु वर्णिता ४ । सर्व कर्ष अद्वित दि वर्षात्मा धनुरववीत ।\* कामकार दिविसीत वद्वियां पश्चारा ५ । खुरा मन्यात्मधु बांसमासमं स्वसरीदनम् । वृतिः प्रवृत्तिनं छोत्वी तद्वेषेष्ठ क्रियतम् ९। † सानात्मेश्वाय्य होसान्य होस्यगेत्वर मकल्पितम् १० । इति शांति पर्व मोद्यध्ये अध्याय ९२ । ‡

ै इल प्रमाण से मनुस्कृति में जहां ने दिसा प्रतिपादक लोक हैं। चह नजुरुत नहीं करे अखने ।

हं कोई २ दीर्च टॉशन एसर भी पाठ बताते हैं यथा :— गुराबस्थाः पश्चीकीं सं द्विजातीनां चलिस्तथा । नीं सकतिनं जले सैतद्देवेषुकथ्यते ।

्राहें शाल पुराष इतिहासिद परमात्मा की खास से प्रगट हुए पद्माः—

्व वयाहें बाह्ये रभ्यमितात्मकामा विनिश्चिरन्त्येव वा मरेऽस्य महत्तो भूतस्य नित् क्विंतिस्तिः स्वेदिते यजुर्वेदः सामवेदोऽथवीङ्गि-रस्य इतिहासः पुराणं विका उपनिषदः स्ठोकाः सत्राज्यतुद्धास्यानि अहिंसा हो धर्म का लक्षण है इसमें वेद प्रमाण है यथाः— ऋवयो ब्राह्मण देवाः प्रशंसंति महामते । अहिंसा लक्षणं धर्म वेद प्रामाण्य दर्शनात् २ । इति अनुशासन पूर्व अध्याय ११ ।

व्याख्यानान्यस्येवैतानि सर्वाणि निः स्वसितानि १०। अध्याय ४ बाह्मण ५ श्रुति ११ में भी ऐसा ही है ।

इति बृहदारण्यकोपनिषत् अध्याय २ बाह्मण ४।

निश्वसितमेव तय हम्बेदो यज्ञ वे दः सामवेदोऽथर्ववेदः शिक्षा करणो व्याकरणं निरकं छन्दो ज्योतिषामयनं न्यायो मीमांसा धर्म-शास्त्राणि व्याख्यानान्युपव्याख्यानाति च सर्वाणि च भूतानि हिरण्य ज्योतिर्यसिक्यमात्माधि झियंन्ति सुवनानि विश्वा।

इति सुवालोपनिषत् खंड २।

वेद का कर्ता कोई नहीं है करुप के आदि में पूर्व के समान वेद की समरण कर ब्रह्मा प्रकाशित करते हैं और जी मनु करुप करुप में होते हैं वे भी उसी प्रकार प्रथम की समान धर्मी को समरण कर प्रकृत करते हैं यथा:—

> न कश्चिद्धे द कर्ता च वेदं स्मृत्वा चतुर्मुखः । तथ्वेव धर्मान्स्मरति मनु कल्पान्तरेऽतरे २१ ।

खर्यभुगनु कहते हैं कि न किसी की मारो न किसी का मांस सावो यथाः—

> न भक्षयित यो मांसं न च हन्यास घातयेत्। तन्मित्रं सर्वभूतानां मनुः स्वयंभुवोऽत्रवीत् १२। इति अनुशासनपर्व अध्याय ११५।

जो पशुपक्षी अर्धिंद के मांस को खाता है यह अपने पुत्र के मांस का खानेवाला कहा जाता है यथा :—

> पुत्रमांसोपमंजानन् खादते यो विचक्षजः । मांस मोह समायुक्तः पुरुषः सोऽधमः स्मृतः ११ । इति अदुशासनपर्व अध्याय ११४ ।

### ऋग्वेद ।

हिंसा रहित यज्ञ देवतायों को पहुँचता है यथा :—

अग्ने यं यज्ञमध्वरं विश्वतः परिभूरसि । स इद्देवे ख गच्छति ४। \* इति मंडल १ अष्टक १ अध्याय १ अनुवाक १ वर्ग १।

इति पाराशर स्मृति अध्याय १।

अ इसका कारण यह है कि—जीवों को दुख देनेसे ईश्वर को

नोट:-वैदिको हिंसा हिंसा न भवति, इसका भी खंडन ही गया ४।

यज्ञ का धर्म अहिसाही है यथा :-

अहिंसा धर्म यागः, ५१ पंक्तिगुटका की

इति पाशुपत ब्रह्मोपनिषत्।

यज्ञाग्नि में स्वीर का होम दे यथा :---

क्षीर होम्यांग्न।

इतिकात्यायनसूत्र पूर्वखण्ड अध्याय ४ खण्ड १० की अखीर पंक्ति।

# यजुर्वेद ।

भग्नि हिंसा नहीं करती यथा :— । श्चिमम्प्रजाब्भ्योहि ६- सन्तम्पृथिब्ब्या .ऽ सधस्त्था दक्तिनम्पुरीष्यम । क्रिरुखत्खनामंऽ. २८।

इतिअध्याय ११।

दुख होता है। क्योंकि सब प्राणियोंमें ईश्वर वास करता है यथा:— ईश्वरः सर्व भूतानां हृद्देशेऽर्जुनतिष्ठति ६१, इति गीता अध्याय १८ । भीर भी पृष्ठ ९ देखो।

### सामवेद ।

मांस खाने वाले राक्षस होते हैं और मांस खाने वालों का अग्निनाश करतो है यथा :—

३१२ ३२३१२३१२३१२ अनुदह सहपूरान कयादो मा ते हेखा सुक्षतरैक्यायाः ८। इति छंद सार्चिक सम्नेय पर्व अध्याय १ खण्ड ८।

## अथर्वणवेद् ।

अखीर में मांस खाने वालों का नाश हो जाता है यथा :—
। ।
।
पिशाचक्षयणमसि पिशाचचात नमेदाः खाहा ४।

इतिकाण्ड २ अञ्चलाक ४ स्क १८।

# कूर्मपुराण।

पहिले युगों में ऋषि और राजा पशुहिंसा रहित यज्ञ करते थे यथा :—

> ससर्जक्ष त्रियान् ब्रह्मा ब्राह्मणानां हितायवै । वर्णाश्रम व्यवस्थाञ्ज ब्रेतायां कृतवान्त्रमु ४१ । यज्ञ प्रवर्तनञ्जेव पद्य हिसा विवर्ज्जितम् ।

द्वापरेऽप्यथ विद्यन्ते मित्रभेदात्तथा नृणाम् ४२। इति वृजीर्द्ध अध्याय २९।

कर्म और श्रेष्ठों का यूजन हिंसा रहित करना चाहिये यथा :— हिंसादि रहितं कर्भ चत्तदी अर\* पूजनम् ८। इति श्री जावाळदर्शनोपनिषद् खण्ड २।

मनु पाराशर व्यासादि ऋषियों ने कितयुगमें केवल दान करना कहा है, यज्ञादि नहीं यथा :—

तपः परं कृतयुगे त्रे तायां ज्ञानमुच्यते। द्वापरे यज्ञमेवाहुदीनमेकं कलीयुगे ८६। §

इति मनुस्पृति अध्याय १।

नोट :—पाराशर स्मृति अध्याय १ क्षोक २३। कूर्म पुराण पूर्वार्क अध्याय २९ क्षोक १० और नारदीय पुराण पूर्वलण्ड अध्याय ४१ क्षोक ८९ में भी ऐसाही हैं ८६।

<sup>\*</sup> ईश्वरः सर्व ईशानः, कांड १ वर्ग १ इछोक ३० । खामीत्वी स्व-रेः प्रतिरीशिता, अधिभूनीयको नेता प्रभुः परिवृद्धोऽधिपः, कांड ३ वर्ग १ इलोक १० । ११ । इत्यमरः ।

<sup>§</sup> कलेर्मध्ये न पश्यन्ति हरेनीमानि केवले ३७। इति पनापुराण

ं द्वापर में यक्ष का करना लिखा है तिस में पशुसे रहित।
नैमणारण्य में सदेव शौनकादि ऋषियों ने पशु होन यज्ञ किये हैं,
गृहस्थों को यही धर्म बताया है इससे सबको पशुहीन यज्ञ करना
स्वाहिये यथा:—

पश्च होनाः कृता यज्ञाः पुरोडासादिभिः किल ३४। इति देवीभागवत स्कंघ १ अध्याय २।

कळियुग में विलकुळ मांस न खाय यथा :—

न कलौ मांस भक्षणम् १७। इति ब्रह्मचैवर्त पुराण श्रीकृष्णजनम् खण्ड अध्याय ८५।

वृहन्नारदीय पुराण (नारदीय पुराण)।

🕽 यह में मोस खाना पशु वध कलियुगमें वर्श्यनीय है यथाः—

समुद्र यात्रास्त्रीकारः कमण्डल्ल विधारणम् । द्विजानोमसवर्णोस्त कन्यास्तर यमस्तथा १३ । देवराच्च स्रतोत्पत्तिर्मधूपर्के पशोर्वधः ।

कियायोगसार खण्ड अध्याय २६।

! यज्ञानां च व्रतानां च तपसां छुतमेव च । इति व्रह्मवैवर्त पुराण श्रीकृष्णजनम् सण्ड ब्रध्याय १२८ स्त्रीक १४ । मांसादनं तथा श्राद्धे वानप्रस्थाश्रमस्तथा १४ । दत्ता क्षत्तायाः कन्यायाः पुनर्दानं वराय च। नैष्ठिकं ब्रह्मचर्यं अ च नरमेघाश्वमेघकौ १५ । महाप्रस्थान गमनं, गोमेघश्च तथा मखः। एतान्धर्मानकत्तियुगे वर्ज्यानाहुर्मनीविष्णः १६ ।

इति पूर्व खरड अध्याय २४।

श्र वर्ष १ संख्या ३८ पटना, आधियन शुक्त ८ शुक्तवार ता० ७ अक्टूबर १९३२ ई० का छ्पा दैनिक श्रीकृष्ण पत्र के पृष्ठ ३ की पांचवी पटली में लिखा है कि । 'ब्रह्मचर्य्य की आवश्यकता नहीं" इटली में जन-संख्या बढ़ाने के लिये जो आन्दो-लन चल रहा है उसका प्रमाणित रूप से समर्थन करने के लिए बतलाया गया है कि योरोपियन मृत्यु-संख्या से अभी तक यही निश्चय रूप से माल्म हुआ है कि ब्रह्मचर्य्य स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है। अब इस बात का पता ठीक ठीक लग गया है कि आविवाहित तथा ब्रह्मचारियोंकी मृत्यु कम अवस्था में एवं अधिक संख्या में होती है और विवाहितों की मृत्यु-संख्या कम है। यह अनुमान योरोप के तेरह मिन्न भिन्न राज्यों की जन-संख्या की रिपोर्ट ले उस पर विचार बरने के बाद निश्चित किया गया है। नोट — ३६ श्रध्याय तक वृहन्नारदीय पुराण है इसके बाद नारदीय पुराण है। इस बात पर खूब ध्यान रहे कि गरुड़ पुराण कोल् टोला स्ट्रीटस्थित ३४।१ नं० वंगवासी ष्ट्रीम मेशिन यन्त्रालय कलकत्ता की छपी है, श्रीर बाकी की सब पुराणें श्रीर उपपुराणें श्री वेंकटेश्वर प्रेस वस्वई की छपी हैं। इस बक्त एक पुराण या श्रानेक यन्थ हो छापाखानों में छपने से कथा इत्यादि में श्रागे पीछे होजाती है, लेखक और छापा-खाने वाले यह बड़ा श्रानर्थ कर रहे हैं। महाभारत नील केंटी टीका सन् १९१३ ईस्बी में गोपाल नारायण कम्पनी यन्त्रालय बम्बई में छपा है।

कलियुग में यज्ञ × करना मना है यथाः—

सब प्रकार के यहां में जप यह श्रेष्ठ है यथाः—
 यहानां जप यहासिम २५ इति गीता अध्याय १०।
 विधि यहाजप यहां विशिष्टो दशिमगुँगैः ८५।
 इति मनुस्मृति अध्याय २।
 पष्ठ १६ का ५०१लोक भी देखो इससे बाद्यमा को तो विशेष

पृष्ठ १६ का ५०१लोक भी देखो, इससे ब्राह्मण को तो विशेष कर जप यज्ञ ही करना चाहिए, क्योंकि कलियुग में धर्म पीड़ित होने से कर्मयञ्ज उठ गये यथाः—

उसीदन्ते तथा यज्ञाः केवला धर्म पीड़िताः ६४। इति ज्ञह्मांड पुराग पूर्व भाग अनुषंग पाद, अध्याय ३१। क्षत्रप्रवालम्भो गवालम्भः सन्यासः प्रतपैतृकम् । देवराच सुतोत्पत्तिः कत्नौ पश्च विवर्णयेत् ॥ नोट— ऊपर का १५।१६ श्लोक देखो ।

इति शब्द कल्पद्रुम गोमेथ शब्द की व्याख्या के अन्तरगत श्रापस्तम्बादि कल्पसूत्र पुराण का बचन ।

कित्युग जोग न जज्ञ न ज्ञाना,

एक अधार राम गुन गाना १०३।

एहि कित्विकाल न साधन दूजा,

जोग जज्ञ जप तप व्रत पूजा १३०।

इति मानस रामायस एकरकारड।

भूठ बोलने वाला यज्ञ कर ही नहीं सकता यथाः — यज्ञो ऽ नृतेन क्षरति तपः क्षरति विस्मयात् ।

इति मनुस्पृति अध्याय ४ श्लोक २३०। और आज कल सब भूठ बोलते हैं।

क्ष निहंतस्य पशोर्यज्ञो स्वर्गं प्राप्तिर्यदीष्यवे । स्विपता यजमानेन किं वा तत्र न हन्यते ३६७। इति पद्म पुराण सृष्टि खण्ड अध्याय १३ ।

# ब्रह्मववर्त्त पुराण।

कित्युग में सब प्रकार के कर्म करना मनाहै क्यों कि जब कोई धर्म ही नहीं रह गया तो कर्म्म कैसे किया जाय। श्री कृष्ण श्रपने पिता नंद जी से कहते हैं कि श्रव झाप गोकुल वासियों के सिहत शीच्र गोलोक चले जाइये, क्यों कि किल का आगमन हो गया, यह कर्म की मूल को नाश करने वाला है। श्रव इसमें यहा इत तप लुप्त हो जांयगे यथाः—

गोलोकं गच्छ शीघं त्वं सार्द्धं गोकुलवासिभिः।
श्रारात् कलेरागमनं कर्ममूल निकृतनम् ११।
यज्ञानां च ज्ञतानां च तपसां लुप्त मेव च।
केदार कन्या शापेन धर्मा नास्त्येव केवलम् १४।

इति श्रीकृष्णजन्मखण्ड अभ्याय १२८।

नोट—यज्ञ त्रत तपोदानं सांगं नैव कलौयुगे ९ इति पद्मपुराण पाताल खण्ड अध्याय ८०। विधि हीन यज्ञ का पाप लगता है इति मनु ८। ३१७।

अस्पिन् मन्वन्तरे धर्मा कृत त्रेता आदिकेयुगे।

सर्वे अर्पाः कृते जाताः सर्वे नष्टाः कलौयुगे १६। २२ श्लोक भी देखो।

इति पराशर स्मृति अध्याय १।

निहें कित्तिकर्म न भगित विवेक्, राम नाम अवलम्बन एक् २७। इति मानस रामायण वालकाण्ड ।

कि शिं पाइ जिमि धर्म पराहीं १६। इति मानस रामायण कि व्किथा कांड।

श्चादि काले खलु यज्ञेषु पशवः समालम्भनीया वभूवुनर्भरम्भाय प्रक्रियन्तेस्म ।

इति चरक संहिता चिकित्सित स्थान अध्याय १० प्रकरण (गद्य) ४।

अर्थ-इसप्रकार किंवदंति (जनश्रुति अर्थात् कहावत) चली आती है कि पहिले समय में यज्ञ स्थल में पशुयों को उपस्थित किया जाता था किन्तु बलिदानादि कार्य नहीं होता था ४।

जो निदंशी हैं पापी हैं हिंसक हैं वे नरक को जाते हैं यथाः—

अशीचा निर्देयाः पापा हिंसकाः ब्रत भंजकाः ।

### सोम विक्रयिणश्चैव स्त्रोजितः सर्वे विक्रयी ९। अ तत्रगत्वा यमालुये १९।

इति बाराह पुराण अध्याय १९५। हिंसक स्नराव योनियों में जन्म लेते हैं यथाः—

हिंसाका दुष्ट योनिजाः ३१।

यह श्लोकका दुकड़ा १८ पृष्ठ में भी है उसे भी इसी अध्याय के इसी श्लोक का समभा जाय। उसका अध्याय और श्लोक का नम्बर भूलसे गलती लिखगया है।

इति वाराह पुषाण श्रध्याय १२०। जो पशुकी हत्या करते हैं वे जितने पशुकी देहमें रोम हैं उतने ही वर्ष नरकों में रहते हैं यथाः—

अ प्राणि हिसा प्रवृत्ताश्च ते वै निरयगामिनः ६९।

इति महाभारत अनुशासन पर्वा अध्याय २३।

मनुमहाराज हिंसा करना मांस खाना विलक्कल मना करतेहैं यथाः—

ना कृत्वा प्राणिनां हिंसा मांसमुत्त्पद्यते कचित्।

न च प्राणि वधः स्वर्ग्यस्तस्मान्मांसं विवर्जयेत् ४८।

इति मनुस्मृति अध्याय ५।, २४ ५ ५ तो ५ रलोक भो देखो।

यावन्ति पशु रोमाणि तावद्वपं सहस्राणि १४। इति भागवत् स्कंध ५ अध्याय २६।

यावन्ति पशु रोमाणि तावत्कृत्वोह मारणम् । दृथा पशुद्धः प्राप्नोति प्रेत्य जन्मनि जन्मनि ३८। इति मनुस्मृति अध्याय ५।

यावन्ति पशु रोमाणि तावतो नरकान्त्रजेत् ४०। ।इति कूर्मपुराण उत्तराह्यं अध्याय १०।

## गरुड़ पुरागा।

वसेत्नरके घोरे दिनानि पशु रोमभिः ७३।

इति पूर्व खरड अध्याय ९६।

हमारे मारवाड़ी समाज में कटकास्थ धर्म प्रदीप श्रीमान् सेठ गिरधारीलालजी और श्रीमान् सेठ वदरीदासजी जिस प्रकार धर्मीत्रति की आकांचा कर रहे हैं यदि इसी प्रकार समाज भी धर्म के उठाने को चाहती तो हत्याकाण्ड में अवश्य कुछ न कुछ शिथिलता आजाती। यो भुंक्ते च हथा मांसं मत्स्य भोजी च ब्राह्मणः।
हरेरनेवेद्य भोजी क्रिमिकुंडं प्रयाति स ५८।
स्वलोग मान वर्षं च तद्भोजी तत्र तिष्ठति।
ततो भवेन्म्लेच्छ जातिस्त्रिजन्म नियतो द्विज ५९।

इति ब्रह्मवैवर्त्त पुराण प्रकृतिखरड अध्याय ३०।

यत्र हिंसा परोधर्मः तत्राधर्मश्च की हशः।
यत्र ब्राह्मण मांसाशी तत्र चांडाल की हशः।
यत्र हिंसक धर्मात्मा तत्राधर्मी च की हशः।
दिजो मत्स्य मांसाशी च तत्र म्लेच्छ श्च की हशः।

इति खहिंसा खादशे शकल ३ खंक ३३ । ३४ ।

वेदव्यासजी का यह कहना है कि जितने कर्म यज्ञादि हैं सब श्रहिंसा में हैं यथा:—

अहिंसा वैदिकं कर्म ध्यानमिन्द्रिय संयमः। तपोऽय गुरुशुश्रुषा किं श्रेयः पुरुषं प्रति १।

इति महाभारत अनुशासन पर्व अध्याय ११३। १९८६ । । मांसस्या ऽमक्षणे धर्मो विशिष्ट इति नः श्रुति ४३। इति महाभारत अनुशासन। पर्व अध्याय ११५। अदिसा तव निर्दिष्ठा सर्व धर्मानु संहिता १९। इति महाभारत अनुशासन पर्व अध्याय ११४। अदिसा परमो धर्म इति वेदेषु गीयते इति ।

इति पद्मपुराण उत्तरखण्ड अध्याय ६४।

नोट—यजुर्वेद अध्याय २ मंत्र १३ में लिखा है कि हिंसा से रहित यज्ञ को करें । तामसी यज्ञ राज्ञसों का होता है क्योंकि ऐसा देवी भागवत स्कंध ३ अध्याय १२ श्लोक ५ में लिखा है ।

उक्त प्रमाण से अच्छी तरह पक्का हो गया कि वेदों में हिंसा वाला कर्म नहीं है. और वेदव्यास ही।वेदों के तत्त्व को।ठीक जानते हैं क्योंकि उन्होंने ही वेदों के विभाग किये हैं यथाः—

युगे युगेल्पकान्धर्मान्त्रिरीक्ष मधुसूदनः । वेदच्यास स्वरूपेण वेद भागं करोति वै १७ । वेद व्यास मुनि साक्षानारायण इति द्विनाः १८ । इति नारदीयपुराण पूर्वभाग अध्याय १।

# अथर्वण वेद।

श्चारादरातिं निक्हित परो ग्राहिं क्रव्यादः विशाचान्। रश्चो यत् सर्वे दुभू तं तत् तम इवायं हन्मसि १२।

इति कांड ८ अनुवाक १ सूक्त २।

पदच्छेद-श्रारात । अरातिम् । निः -ऋतम् । परः । । । । । ग्राहिम । क्रव्य-श्रदः । पिशाचान् । रक्षः । यत् । सर्वम् ।

दुः भूतम् । तत् । तमः इव । अप हन्मसि १२ ।

श्रथं- (श्ररातिम्) निर्दान्ता, (निर्स्कृतिम्) महामारी [दिरद्वता श्रादि महाविपत्ति] का (श्रारात) दूर, (श्राहिम्) जकड़ने वाली पीड़ा, (कव्यादः) मांस खानेवाले [रोगों] श्रौर (पिशाचान्) मांस भखनेवाले [जीवों] को (परः) परे। श्रौर (यत्) जो छुछ ( हुर्भूतम्) कुशील (रच्चः) राच्चस [दुष्टवाणी है], (तत्) उस ( सर्वम्) सवको (तमः इव) श्रंधकार के समान (श्रपहन्मिस) हम मार हटाते हैं १२।

यः पौरुषेयेण क्रविषा समङ्क्ते यो अश्ब्येन पशुना

यातुधानः । यो अध्नयाया भरति क्षीरमम्ने तेवां शीर्षाण् इरसापि दृश्च १५।

इति कांड = अनुवाक २ सूक्त ३।

पदच्छेद-यः। पौरुषेयेख । क्रविषा । सम्-ग्रङ्कते ।

यः । श्रश्च्येन । पशुना । यातु-धानः ॥ यः । श्रष्टन्यायाः।

। । । । ।

भरिस । श्रीरम् । श्रुने तेपाम् शीर्षाखि । इरसा । श्रा पि ।

#### बुश्च १५।

श्रर्थ-(य:) जो (यातुधानः) दुखदायी जीव (पौरुषेयेण) पुरुष वध से [प्राप्त] (क्रविषा) मांस से (यः) जो (श्ररव्येन) घोड़े के [मांससे] श्रोर (पशुना) [दूसरे] पशुसे (समङ्क्ते) [श्रपनेको] पृष्ट करता है। श्रोर (यः) जो (श्रष्टययाः) [नहीं मारने योग्य] सो के (सीरम्) द्धको (भरति=हरति) नष्ट करता है (श्राग्ने) हे श्राग्त [समान तेजस्वी राजन्] (तेपाम्) उनके (शीर्षाणि) शिरों को (हरसा) श्रपने वलसे (श्रपियुरच)काटडाल १५।

भावार्थ-जो कोई पुरुष, मनुष्य वा घोड़े वा अन्य पशु का मांस खाबे वा गो को सार कर दूधको घटाबे, राजा उसका शिर कटवादे १२। यही मंत्र ऋग्वेद् संडल १० अष्टक ८ अध्याय ४ अनुवाक ७ वर्ग ८ में लिखा है १५।

भ व शर्मावस्यतां पापकृते कृत्याकृते । दुष्कृते विद्युतं देवहेतिम् २३ ।

इति कांड १० अनुवाक १ सुक्त १।

पदच्छेद-भवाशवीं । श्रस्यताम् । पाप कृते । कृत्या-। । । कृते । दुः-कृते । वि-स्तम् । दे च हेतिम् २३ ।

ऋर्थ—(भवाशनों) सुख देनेवाले और दुख नाश करनेवाले [राजा और मंत्री दोनों] (पापकृते) पाप करनेवाले (कृत्यकृते) हिंसा करनेवाले और (दुष्कृते) दुष्कर्मी पुरुष के लिये (देवहेतिम्) विद्यानों के वज्र (विद्युतम्) विजुली [शस्त्र] को (अस्यताम्) गिरावे २३।

कृत्याकृतो वलागिनो ऽ भिनिष्कारिणः प्रजाम्। मृखी । । । । हि कृत्ये मोच्छिषो ऽ मृन् कृत्याकृतो नहि ३१। पदच्छेद-कुत्या-कृतः। वलगिनः। श्रम् -निष्कारिणः

म-जाम् ॥ मृत्ती-हि । कुत्ये । या । अत् । शिषः । श्रम्न ।
, कृत्या-कृतः । जहि ३१ ।

चर्थ—(कृत्ये) हे कर्तव्य छुशल [सेना ?] (कृत्याकृतः) हिंसा करने वाले (वलिगनः) गुप्त कर्म करने वाले और (अभिनिष्कारिणः) विरुद्ध यत्न करने वाले की (प्रजाम्) प्रजा [ सेवक आदि ] को (मृणीहि) मारडाल , (मा उन् शिष) मत छोड़, (अमृन्) उन (कृत्या कृतः) हिंसा करने वालों को (जिहि) नाश कर ३१। नोट—अथर्वण वेद काण्ड १२ अनुवाक १ स्क १ मन्त्र ५० और प्रजान कर स्क १ मन्त्र ५० और प्रजान कर स्क १ मन्त्र ५० और प्रजान स्वत्या वे वारायाः किमीदिनः इत्यादि ५०। अग्नी । प्रमुस्तमो ये वारायाः किमीदिनः इत्यादि ५०। अग्नी । रम्वस्तपत्र यद विदेवं कृत्यात पिशाच इत्यादि ४३।

जो मनुष्य पशुष्यों को बेचते हैं वह कभी भी सिद्धि को प्राप्त नहीं होते न सुख पाते हैं श्रीर उस जीव को वा मनुष्य को मृतक समभना चाहिये क्योंकि सब जीवों में सब देवता निवास करते हैं यथा:— पंचेन्द्रियेषु भूरेषु सर्व वसित दैवतम् । श्रादित्यश्चन्द्रमा वायुर्वह्मा पाणः क्रतुर्यमः ४०। तानि जीवानि विकीय कामृतेषु विचारणा । श्रजो ऽ मिर्वरुषो मेषः सूर्यो ऽ श्वः पृथिको विराट्४१। धेतुर्वत्सश्च सोमो वै विकीयै तन्नसिध्यति ४२ ।

इति महाभारत शांति पर्व मोक्षधर्म अध्याय ८९। नोट – ऋतु = विष्णु। जब कि पशुस्रों के वेचने का इतना बड़ा दोष बताया है तो पशु खाने वाले को क्या कहेंगे।

# शिव पुराण।

शिव भक्त को अहिंसक होना चाहिये यथाः—
न्यायार्जित सु वित्तेन वसेन्प्राज्ञः शिवस्थले ।
जीव हिंसादि रहितमितक्केश विवर्जितम् ११५ ।
इति विद्येखर संहिता अध्याय ६८।

कदान भरम को यारण करने वाले शिवोपासकों को मधा मांस लहसुन प्याज वर्जित है यथाः— मद्यं मोसं तु लशुनं पलाएडुं शिश्रुमेव च । श्लेब्मांतकं विडवराहं भक्षणे वर्जयेत्तवः ४३ ।

इति विद्येश्वर संहिता श्रध्याग २५। शंकर भक्तों को सब का हित करना चाहिये यथाः— सर्व भृत हिते रतः ८६।

इति रुद्र संहिता खरड १ घ्राध्याय १२। सब को अहिंसक होना चाहिये यथाः—

तथे वे मरणाद्गीतिरस्पदादि वपुष्मेताम् । ब्रह्मादि कीटकांतानां तथा मरणतो भयम् १४ । सर्वे तनु भृतस्तुल्या यदि युद्ध्या विचार्य्यते । इदं निश्चित्यंकेनापि नो हिंस्यः कोऽपि कुत्रचित्१५। धर्मो जीव दया तुल्यो न कापि जगती तत्ते । तस्मात्सर्व पयत्नेन कार्या जीव दया तृभिः १६ । एकस्मिन् रक्षिते जीवे त्रैतोक्यं रक्षितं भवेत् । धातिते घातितं तद्वत्तस्माद्रक्षेत्र धातयेत् १७ । अहिंसा परमो धर्मः पापमात्म प्रपीडनम् ।

श्रपराधीनता सुक्तिस्स्वर्गो ऽ भिलपिताशनस् १८। पूर्व सूरिभिरित्युक्तं सत्पमाण तया भ्रवम् । तस्माञ्च हिंसा कर्तव्या नरैर्नरक भीरुभिः १९। न हिंसा सदृशं पापं त्रैलोक्ये सचराचरे। हिंसको नरकं गच्छेत् स्वर्ग गच्छेदहिंसकः २०। संति दातान्यनेकानि किं तैस्तुच्छ फल पदैः। अभीति सदशं दानं परमेकमपीह न २१। इह चत्त्रारि दानानि मोक्तानि परपर्षिभि:। विचार्य नाना शास्त्राणि शर्मणे ऽत्र परत्र च २२। भीतेभ्यश्चाभयं दयं व्याधि तेभ्यस्तथौष्यम । देया विद्यार्थिना विद्या देयमनं क्षुपातुरे २३। यानि यानीह दानानी बहुपन्युदितानि च। जीवाभय पदानस्य कलां नाईति घोडशीम् २४। प्रमाणिकी अतिरियं पोच्यते वेद वादिभि:। न हिंस्यात्सर्व भूतानि नान्या हिंसा प्रवर्तिका३१। अप्रीष्टोमीयमितिया आमिका सा इसतामिह। न स मनाखं बाद्रणां पश्वालंभन कारिका ३२।

बुक्षांशिक्षत्वा पश्चन्हत्वा कृत्वा रुधिर कई भम् । दग्ध्वा वहाँ तिलांड्यादि चित्रं स्वर्गो ऽ भिलष्यते ३३। अ

इति स्ट्रसंहिता खंड ५ अध्याय ५।

नोट - श्रसिपत्रवनं याति वृत्तच्छेदी वृथैव यः १८।

इति शिवपुराण उमा संहिता अध्याय १६।

अ यदि जीव अमर होता तो जीवोंके रारीर काटनेको ऋहिंसा कहते यथाः—

श्रविनाशोस्य सत्वस्य नियतो यदि भारत। भित्वा शरीरं भूतानामहिंसा प्रतिपद्यते ५।

इति महाभारत आश्वमेधिक पर्वे अध्याय १३।

नाशानाशवान् ४ प्रकार का होता है, चर १ अच्चर २ निरच्चर ३ निरच्चरातीत ४, इनके निर्णय में पंच सर्गीय महारामायण सर्ग ३ [५०] क्षोक २ से ११ तक देखो। यह आश्वमेधिक पर्व अध्याय १३ का पांचवा ऋोक चर शब्द ( जीव ) का बोध कराता है। इसी-वास्ते किसी के भी शरीर को दुख देने से पाप लगता है, प्रत्यच्च में भी तुम अपने शरीर के दुख-सुख से दूसरे के शरीरों का दुख सुख जान सकते हो।

जो शिवभक्त मांसादि अभन्न को भन्नण करता है वह महा पापी है यथाः—

त्रामिषं शिव भक्तानामभक्ष्यस्य च भक्षणम् ३३ । इति उमासहिता अध्याय ५ ।

्रात ज्यातालुका से ग्रह्मात

नोट-यह ध्यान रखना चाहिए कि यह ऋोक महापापों के शकरण में का है।

अख-राखों का बनाना बेचना लेना निषेध है यथाः—

घतुषः शस्त्र शस्यानां कर्तायः क्रय विक्रयी। अ निर्द्यो ऽ तीव भृत्येषु पश्चनां दमनश्चयः २६।

इति उमा संहिता अध्याय ६।

क्षजो सब प्रकार के अख-राखों को बनाता है और धनुष-वारा बनाता है वह नरक में गिरता है यथाः-

शस्त्राणां चैव कर्तारः शल्यानां धनुषां तथा। विकेताश्च राजेन्द्र नरा निरय गामिनः १७।

इति पद्मपुराण भूमिखंड श्रध्याय ९६।

जो बैंलको विधिया करते, नाथते और गौ को जोतते हैं वे महा पापी हैं महा नरक को जाते हैं। और जो बैल भार के ढांने से घायल दुखी भूखा है और जो उन भूखोंको यत्नसे नहीं पालचे बे मोहत्यारे और महापापी हैं यथाः—

ये भारक्षत रोग्यर्तान्गो दृषांश्च क्षुघातुरान् । न पालयंति यत्नेन गोघ्नास्ते नारकास्स्मृताः ३३ । बृषाणां बृषणान्ये च पापिष्ठा गालयंति च । वाह्यंति च गां बंध्यां महानारकीनो नराः ३४ ।

नोट-उक्त श्लोक महापापों के प्रकरण में के हैं।

इति उमासंहिता अध्याय ६।

धनुषवाण बनानेवाला नरकको जाता है यथाः— शल्यानां धनुषांचैव ते वै निरय गामिनः ७६। इति महाभारत श्रानुशासन पर्व श्रम्याय २३ ।

मनुस्मृति ऋष्याय ३ स्होक १६० में भी ऐसा ही है। हिंसा करने वाले यंत्रों का बनाना उपपातक है यथा "हिंस्रयंत्रं विधानं च २४०" इति याज्ञवल्क्य स्मृति ऋष्याय ३। न तिलमात्र मांस खाय और न किसी को देवे यथाः— यतस्तं मांसमुद्धृत्य तिलमात्र प्रमाणतः । खादितुं दीयते तेषां भित्वा चैव तु शोणितम् ५०।

इति उमासंहिता अध्याय १०।

सनुष्य का बड़ा धर्म आचार ही है । आचार से भृष्ट की लोक में निंदा होती है बथा ।:—

श्राचारः परमोपमः श्राचारः प्रमं धनम् । श्राचारः परमा विद्या श्राचारः परमा गतिः ५५ । श्राचार होनः पुरुषो लोके भवति निन्दितः । परत्र च सुखी न स्यात्तस्यादाचारवान्भवेत् ५६ ।

इति वायवीय संहिता उत्तरखंड अध्याय १५)

नोट-उत्तम खान-पान को ही आचार कहते हैं। मतुन्मृति अध्याय १ श्लोक १०७-१०८ में लिखा है कि चारों वर्णों को आ-चार करना चाहिये और आचार ही परम धर्म है यह बेद-शास्त्र कहते हैं। अध्याय २ श्लोक ६ में क्लिखा है कि आचार साधुवां की आत्मा को शुद्ध करता है।

## पद्मपुराया।

यदि क्ष्यत्र में पशु इत्या करनेवाला ही स्वर्ग को जायगा तो नरक में कौन जायगा यथाः—

यज्ञं क्रत्या पशुं हत्वा क्रत्या रुधिर कर्दमम्। यद्येवं गम्यते स्वर्गी नरकः केन गम्यते ३२३। इति सृष्टि खण्ड ऋध्याय १३।

माह्मण सांस खानेसे पतित होते हैं यथा:—

आकाश गामिनो विषाः पतिता मांस अक्षणात् । 🗴 तेषां न विद्यते स्वर्गो मोक्षो नैवेह दानवाः ३२५ । इति सृष्टि खण्ड अन्याय १३ ।

हम नहीं जानते कि परिड उलोग क्यों मांस खाते हैं यथा:-

श्रवमेव मलः पुरयः क्लोनैव प्रवर्तते ७५ इतिपद्मपुरास
 पाताल खरड अध्याय ८५।

<sup>×</sup> अज्ञानाद् भन्तयन् मांसं सप्तेतो जायतेनरः ६० इति गरुड़ पुराण् उत्तर खण्ड श्रम्याय २२।

जातस्य जीवितं जंतोरिष्टं सर्वस्य जायते। त्र्यात्म मांसोप मंगांसं कथं खादेत् पंडितः ३२६।

इति सृष्टि खरड अध्याय १३।

पशुघात दुष्ट धर्म है यथा:-

तदलं पशु घातादि दुष्ट धर्मेनियोधत ३६१।

इति सृष्टिखरुड श्रम्याय १३।

यदि यज्ञ कर्म दूसरे को दुखदाता है तो वृथा है यथा:-

यज्ञ कर्म कलायस्य तथाचान्ये द्विजन्मनाम्। नैत्युक्ति सहं वाक्यं हिंसा धर्माय जायते ३६५।

इति सृष्टिखण्ड अध्याय १३।

ऽ यदि यज्ञ कर्म दूसरे को सुखदाई है तो यजमान अपने विताको मारडाले यथाः—

ऽ देवर्षबोथ ये चान्ये नैिंद्कं पत्तमाश्रिताः । हिंसा शायाः सदा क्रूरा मांसादाः पाप कारिणः ३२० इति पद्मपुराण सृष्टि खंड अध्याय १३।

निहंतस्यं पशोर्यक्षे स्वर्गे पाप्तिर्यदीष्यते । स्विपता यजमानेन किं वा तत्र न हन्यते ३६७ ।

इति सृष्टिखरङ ऋध्याय १३।

नोट-श्रात्म मांखोप मंगांसं कथं खादेति जंतवः ३९६।

इति सृष्टि खण्ड श्रध्याय १३ ।

प्राणि के बध होने में शपथ खाना मूठ बोलना पाप नहीं है बधाः—

प्राच स्यागे सम्रत्यक्षे शपयैर्नास्ति पातकम् ३९१ । चत्तवानृतं भवेद्यत्र प्राणिनां प्राच रक्षणम् । व्यनृतं तत्र सत्यं स्यात् सत्यमप्यनृतं भवेत् ३९२ । परेषां प्राणरक्षार्थं वदाम्येदानृतं वचः ३९४ ।

इति सृष्टिखण्ड ऋध्याय १८।

संसार में जितने मनुष्य धर्म हैं सब श्राह्सा के भीतर हैं। यथाः—

प्रविशंति यथा नद्यः समुद्र मृजु वक्रगाः ।
सर्व धर्मा ब्रहिसायां प्रविशंति यथा दृद्म् ३७ ।
इति स्वर्गखण्ड ऋष्याय ३१ ।

यथा इस्ति पदेष्वन्बत्पदं सर्वं प्रजीयते । सर्वे धर्मस्तथा व्याघ्र प्रजीयन्ते हाहिसया ४४१ ।

इति सृष्टिखरड श्रध्याय १८।

हिंसक ऋन्धे होते हैं यथाः—

मातृवत् पर दारांश्व पर द्रव्याणि लोष्टवत् । श्रात्मवत्सर्व भूतानि यः पश्यति स पश्यति ३३७ ।

इति सृष्टिखंड श्रध्याय १९।

दयावान पुरुष मरने पर प्रेत नहीं होते यथाः— सर्वभूत दयापन्नो न प्रेतो जायते नरः ४० ।

इति सृष्टिखंड अध्याय ३२।

यज्ञ में देवतों को खीर पाक खवाना चाहिये यथ।:—

यज्ञेषु च हिनः पाकं १६३। देवा भुजित इन्यानि वित्तं मेतादयो सुराः ११६।

इति सृष्टि खंडे ऋष्याय ४०। ४६।

नोट-यद्मार्थका द्वेलका नाचत्रा माम याजकाः।

परदारस्ता नित्यं पंचैते ब्राह्मणार्धमाः ११२।

इति सृष्टिखंड श्रन्थाय ४७ ।

संसार में विना आचार के मनुष्य का कल्याण नहीं हो सकता यथाः—

अनाचारी हतो विमः स्वर्गलोकेषुगहितः १२। आचाराञ्चभते आयु आचारा लभते सुखम् ७५। आचारात्स्वर्ग मोक्षं च आचारो हत्यलक्षणम्। अनाचारो हि पुरुषो लोको भवति निदितः ७६। अ इति सृष्टिखंड अध्याय ४९।

श्रदिसा परमा सिद्धिः ६१।

इति सृष्टि खंड अध्याय ५३।

मांस खानेवाले पाप खाते हैं यथा :—

श्राचारेण विना मर्त्यो झान हीनो यतिर्तथा। मंत्र हीनो यथा राजा तथा यं नैव शोभते ४४। इति पद्म पुरास भूमिखंड अध्याय ४२। भक्ष्याभक्ष्य समध्नंति मत्स्य मांसादिकं नराः।
वने द्विजातयाश्चान्ये भुंजते च पापकम् ५१।

इति सृष्टिखंड अध्याव ७६।

हमको दयाधर्म से ही मोज्ञ दिखाती है यथाः— दयाचैव परो धर्मस्तत्र मोक्षः मदृश्यते १७।

इति भूमिखंद खध्याय ३७।

जो जीवों पर द्या करता है श्रोर उनकी रक्षा करता है वह चंडाल श्रीर शूद्र भी ब्राह्मण है श्रीर जो ब्राह्मण निर्देशी है पशु भातक है वह पापी श्रीर कूर है यथा:-

दयादान परो नित्यं जीवमेव प्ररक्षयेत् । चाण्डालो ऽ प्यथ श्रुदो वा स वै ब्राह्मण उच्यते ४३ ब्राह्मणः निर्दयो यो वै पशुघात परायणः। स वै सु निर्दयः पापी कठिनः क्रूर चेतनः ४४। अ

इति भू मिखंड अध्याय ३७।

क्ष श्राततायी ब्राह्मण के मारने में पाप नहीं लगता श्रीर न कोई दोष है देखो ब्रशिष्ठ स्मृति श्रान्याय ३ श्लोक २० श्रीर मनु- अहिंसा ही सब धर्में। से बड़ाधर्म है यथा:-

श्रिहंसा परमो धर्मो हाहँसैव परं तपः।
श्रिहंसा परमं दानिमत्याहुर्मुनयो सदा २७।
मशकान्सरी सृपान् दंशान्यूकाद्यान्मानवास्तथा।
श्रात्मौपम्येन पश्यंति मानवा ये दयालवः २८।
भूतानि येत्र हिंसंति जलस्थलचराणि च।
जीवनार्थं च ते यांति कालस्त्रं च दुर्गतिस् ३०।
इति स्वर्गखण्ड श्रध्याय ३१।

नोट—ब्रहिंसा परमोधर्म इति वेदेषु गौयते ६३ । उत्तर खंड

हिंसक यहां वहां दोनों लोकों में सुख नहीं पाते यथाः-

लोकद्वये न विद्ति सुखानि पाणि हिंसकाः ३६ । इति स्वर्गखंड श्रम्याय ३१।

स्मृति अध्याय ८ ऋोक ३९०-१४४। आततायी का स्वरूप देखों मनुस्मृति अध्याय ८ ऋोक १८७-१८८ और वशिष्ठ स्मृति अध्याय ३ ऋोक १९। संयोगं पतितैर्गत्वा (इति मनु १२। ६०) अर्थान् प-तित का संसर्गी ब्रह्मरान्स होता है। नोट – हिंसा भवन्ति कव्याशः (इति मनु० १२। ५९) ऋर्थान् प्राणियों का बध करनेवाले, कच्चे मांस भन्नण करनेवाले जंतु होकर जन्मते हैं ५९।

मेत धुमं विवर्जयेत् ६७।

इति स्वर्गखंड ऋध्याय ५५

जितने पशु की देह में रोम हैं उतने वर्ष हिंसक को नरकर्में रहना पड़ता है इससे प्राणि हिंसा को छोड़े यथा:--

यावन्ति पशु रोमाणि तावन्नरकमृच्छति ४२ । अ० ५६ । माणि हिंसा निष्टत्तश्र १९ । अ० ५९ ।

इति स्वर्गस्यग्रह।

प्राणियों की इत्या करना महापाप है यथा:--

माणिहत्या महापापं ७७।

इति पातालखराड अध्याय २०

मांस खानेवाले की दुद्शा यथा:-

राक्षसी योनिमाप्तोति सक्रन्मांसस्य अक्षणात् । षष्ठि वर्ष सहस्राणि विष्ठायां परिपच्यते २१।

#### तन्मुक्तो जायते पापो विष्ठाशी ग्राम सूकर: २२। नोट-यह कार्तिक महीने का ही नियम है। इति उत्तर खंड अध्याय ११८।

# मार्कण्डेय पुराण।

प्राणियों को भयभीत करनेवाले मृत्युकाल में प्राणित्री बेदना भोगते हैं यथाः—

पाणब्री वेदनां कष्टां ये चानुद्वेगकारिणः ५७। इति अभ्याय १०।

जो बैल को बिधया करता है वह नपुंसक होता है फिर २१ जन्म कृमि कीट पतंग जलचर पत्ती मृग तथा गो योनियों में उत्पन्न हाता है, इसके पोछे चांडाल डोमादि नीच योनियों में जन्म लेता है, फिर लॅंगड़ा अंधा बहिरा कोढ़ी तथा यदमा रोग से पीड़ित होता है यथा:—

वृषस्य दृषग्गो छित्वा षंडत्वं प्राप्तुयान्तरः ३३।
पिन्हत्य तथा भूगो जन्मनामेकविंशतिः।
कृमिः कीटः पतंगो वा पक्षी तोयचरो मृगः ३४।
गोन्वं च पाप्त चांडाला पुरुकसादि जुर्गुप्सतम्।
पंग्वंथो बिधरः कुष्टी यक्ष्मणा च प्रयोडितः३५।
इति अध्याय १५।

गृहस्थ को सदा आचार पालन करना चाहिये यथा:-

गृहस्थेन सदाकार्यमाचार परिपालनम् । न श्वचार विहोनस्य सुखं यत्र परत्र च ६ ।

इति अध्याय ३१।

## व्रह्माण्डपुरागा।

यज्ञ हिंसाका निषेध यथाः—

महर्षयस्तु तान्हञ्चा दीनान्पशु गर्णास्तदा ।
पमच्छुरिद्रिं संभूय को ऽ यं यज्ञ विधिस्तव १६।
स्रियमी विज्ञवानेष हिंसा धर्मेष्सया ततः ।
ततः पशु वधश्रेषतव यज्ञे सुरोत्तम १७।
स्रिधमी धर्म धाताय प्रारव्धः पशु हिंसया ।
नायं धर्मो ह्ययमी ऽ यं न हिंसा धर्म उच्यते १८।
यज्ञ वीजैः सुर श्रेष्ठ येषु हिंसा न विद्यते २०।
तस्मादहिंसा धर्मस्य हारसुक्तं महर्षिभिः ३५।

इति पूर्वभाग अनुषंगवाद अध्वाय ३०। चारो वर्गोंको चार प्रकार के यज्ञ यथाः- अ।रंभयज्ञाः अत्राश्च हिवर्यज्ञा विश्वस्तथा । परिचार यज्ञाः ऋद्रस्तु जप यज्ञाः द्विजोत्तमाः ५५। इति पूर्वमाग अनुषंगपाद अध्याय २९।

नोट-यज्ञानां जप यज्ञोस्मि गीता १०। २५। विधि यज्ञाञ्जप यज्ञो विशिष्टो दशभिर्गुर्णैः मनु २। ८५। पृष्ठ १६ में ५० रत्नोक भी देखो ।

## भविष्य पुराण।

अनेक प्रायश्चित यथा:-

आंध्रमाविक दुग्धं च असं मृतक सृतके। चौरस्याननं मृतश्राद्धे भुक्तवा चांद्रायणं चरेत् ४७। मृताननं मधु गांसं च यत्सु भुंजीत ब्राह्मणः। स त्रीणयहान्युपवसेदेकाहं चोदके वसेत् ५९।

इति बाह्मपर्व ऋच्याय १८४।

राजा प्राचीनवृद्धि ने नारद के उपदेश से हिंसा वाला यज्ञ क्षोड़ दिया यथा—

राजा पाचीनवर्हिश वसूव मख कारक: १।

नारदस्योपदेशेन त्यक्तवा हिंसा मयं मखम्। ज्ञानवान वेष्णवो भूत्वा दश पुत्रानत्रीजनत् २ ।

इति प्रतिसर्ग पर्व अन्याय १६।

नोट—किसी प्रकार की भी हिंसा करनेवाला बैंघणव नहीं हो सकता। इसी १६ और १७ अध्याय में नामदेव, रामानन्द, शिकंदर, रंकण बैश्य १६।, कबीर. नरसीबैश्य, पीपा. नानक, नित्यानंद १७।, इत्यादि नाम हैं और कौन किसका शिष्य है।

निस्ताराय तु लोकानां स्वयं नारायणः प्रभुः। व्यास क्रपेण कृतवान् पुराणानि महीतले। इति शब्दकल्पद्रुम पुराण शब्दान्तरगत। सका ३९ का १७ खोक भी देखो। व्यासो वेद विदांवरः २०।

इति महाभारत आश्रमवासिक पर्वे श्रध्याय ३०।

#### महाभारत।

यदि तुम छाग (बकरे) के कल्याणार्थ यज्ञ करते हो, श्रौर छाग के प्राण वियोग कराने से तुकको उसका कल्याक दिखाता है, तो तुम्हारा क्या प्रयोजन निकला, केवल छाग ही का कल्याण हुआ यथा:- प्रासौर्वियोगेच्छागस्य यदि श्रेयः प्रपश्यति । छागर्थे वर्त्तते यज्ञो भवनः किं प्रयोजनम् ११ । इति महाभारत ज्ञान्यमेधिक पर्वज्ञक्ष्याय २८ ।

"नोट—(क)पशुका कल्याग हुवा या नहीं, (गीतार 1२८)परन्तु तुमने उसके शरीर को ईंधन सरीखा श्राग्न में जला दिया केवल श्राप्त के वास्ते ( देखो एष्ठ ३३ की टिप्पणी का ३६७ श्लोक), श्रीर किसी तरह खाया, मुदें को ही श्राग्न में जला के खाया। मनुष्य, जलचर, थलचर, श्राकाशचरादि जो मर जाते हैं वे मुदें ही होते हैं। इससे यह तुम्हारा कहना पाखंड है कि यज्ञ का मरा पशु स्वगं को जाता है श्रीर इसे वैदिक यज्ञ नहीं कहते किन्तु पाखर यज्ञ कहते हैं। इसी श्रांप्य का १५ श्लोक देखो।

यदि ऐसा ही है तो नरमेध, गोमेध, अश्वमेध इन यहां को भी इस वक्त करो और तत्तत जानवरों को खावो, दीन बकरी के बच्चे ने ही तुम्हारा क्या बिगाड़ा है जो उसे कुत्ते गीदड़ सरीखा मारके चबा जाते हो। मांशासी पशु के मांस के बदले यदि मनुष्य मांस खायें कि जो मनुष्य मृत्यु से मर जाता है तो क्या हानि है, क्योंकि मांस तो सब का ही अशुद्ध होता है। यज्ञ करने वाले यदि बेद के मतलब को जानते (गीता १४। १ से ५) तो हिंसा ही क्यों करते। तपोधन ऋषियों ने यझ की पशु हिंसा का निषेध किया है, इस वास्ते जो बेद की हिंसा को अहिंसा कहते हैं वे कितव हैं। यदि बेद की हिंसा अहिंसा कही जाती (जैसा कि "वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति") तो सुझ ऋषि क्यों यझ (बेद) की हिंसा का प्रतिषेध करते यथा:—

ततो दीनान्पश्नन्दृष्ट्वा ऋषयस्ते तपोधनाः।
ऊचुः शकं समागन्य नायं यज्ञविधिः शुभः १२।
अपरिज्ञानमेतत्ते महान्तं धर्मीमच्छतः।
न हि यज्ञे पशुगणा विधि दृष्टाः पुरन्द्र १३।
धर्मोप्रधातकस्त्वेष समारम्भस्तव प्रभो।
नायं धर्म कृतो यज्ञो,न हिंसा धर्म उच्यते १४।

इति महाभारत आश्वमेधिक पर्व अध्याय ९१।

(स) श्रहिंसा सर्वे घर्माणिमिति वृद्धानुशासनम् । यदिंहसं भवेत्कर्मे तत्कार्यमिति विद्यहे १६। श्रहिंसा सर्वे भूतानां नित्यमस्मासुरोचते १८।

इति महाभारत आरवमेधिक पर्व अध्याय २८।

ब्राहिंसा सर्व भूतानामेतत्कृत्यत्यंमतम् २।

इति महाभारत आरवमेधिक पर्वे अध्याय ५०।

चिता यज्ञं करिष्यामि विधिरेष सनातनः १८। इति महाभारत आश्वमेधिक पर्वे अध्याय ९२।

(चिंतायझं ⇒मानसीयझं) । ज्ञान यज्ञ (गीता ९ । १५) । ऋहिंसा सर्वो घर्मानां [परंमहत् ] ८१ ।

इति पंचसर्गीय महारामायण सर्गः ५ [५२]।

(ग) ऋषि और मनुष्य अलग २ हैं, देखी ब्रह्मपुराण गत गौतमी माहात्म्य अध्याय १ श्लोक ४-६, भागवत स्कंघ ७ अध्याय १४ श्लोक १५ और मानस रामायण किर्किश्चा कांड १३। मनुष्यों को ही पाप लगता है, ऋषि मुनियों को नहीं क्योंकि जितने धर्मशास्त्र हैं वो सब मानव धर्मशास्त्र हैं। जो लोग ऋषि, देवता और भग वत अवतारों का प्रमाण पाप सिद्ध करने को दे बैठते हैं, यह उन कीं गल्ती है। पुनः सामर्थवान पुरुषों को दोष नहीं लगता, 'समस्थ कहँ नहिं दोष गोसाईं। रिव पावक मुरसरि की नाईं।, इति मानस रामायणवालकाएड ६९। वायु की समान सामर्थवान पुरुष दोषमें लिप्त कभी नहीं होते इतिमार्कण्डेयपुराण अध्याय १६ श्लोक ११६।, याझवल्क्यस्मृति अध्याय ३ श्लोक ३११ में लिखा कि धर्मात्माओं को महापाप भी नहीं लगसकते।

(क) बकरे भेड़े और मछली का मारना संकरी करण पाप है

श्रर्थात् इनके वध करनेमें मनुष्य शंकर होजाते हैं इतिमनु ११।६९। संकरी करण पाप करने वाले १ मास चांद्रायण वत करने से शुद्ध होते हैं, इतिमनु ११। १२६। बकरा वा भेड़ा बध करनेवाला एक बैलको दान करनेसे शुद्ध होता है, इतिमनु ११। १३७, वृहत्पाराश-रीय धर्मशास्त्र ६।१६१, याज्ञबल्क्यम्मृति ३।२७१। कछुए का मारने वांला एक वर्ष तक ब्रह्महत्या का ब्रत करने से शुद्ध होता है इति शंखस्मृति १७ । २२ । पाराशरम्मृति ६ । १० में लिखा है कि कछुए के बध करने वाले दिन रात निराहार रहने से शुद्ध होते हैं। गांव में रहने वाले पशु का बध करने वाला एक मास तक ब्रह्म हत्या का व्रत करें तब शुद्ध होता है, इतिशंखस्मृति १७ । १० । पत्ती सर्पे जल में रहने वाले मछली आदि जीव अथवा विल में रहने वाले चृहे आदि जीव का वध करने वाला ७ रोज बहाहत्या का वत करें तब शुद्ध होता है, इति शंखस्मृति १७।११। मछली को मारने वाला ३ रात्रि उपवास करने से शुद्धहोता है, इति बृह्दिष्णु समृति अध्याय ५० श्रंक ३२।

एक खुर वाले (घोड़े स्नादि) तथा दोनों स्नोर के दातों से खाने वाले (खस्सी त्रादि) पशु का मांस खानेवाला भी ३ रात निराहार रहें तब शुद्ध होता है.इतियृहद्विष्णु स्मृति ५१। ३०। जल क में बिचरनेवाले, जलमें उत्पन्न होने वाले चोंच तथा नख से खोदने वाले, जाल के समान पैर वाले, पद्मी का मांस खाने वाले ७ दिन तक बहाहत्याका बत करें तब शुद्ध होतेहें, इतिशङ्क स्मृति १०१६। वकरे का मांस खाने वाला १४ दिन तक बहाहत्या का बत करें तब शुद्ध होगा, इतिशङ्क स्मृति १७। २९। मछली की हड्डी छूजाने से मनुष्य पापो हो जाता है, इतिअविस्मृति १८०-३०२। मछली खाने वाला ३ दिन उपवान करें, इतिअव्हपुराण पूर्वाखंड ९६। ७१। मछली का मांस खानेवाला १२ दिन तक निराहारवत करें, इति उशनस्मृति अध्याय ९ अशेक २५ से २८ तक। सब मनुष्यों को बिलकुल मछली खाना मनाहै इतिमृत् ५।१५, याज्ञवल्क्य १।१०५, पद्मीराण स्वगंखंड ४६। ३०।

(ङ) याज्ञवल्क्य स्मृति अध्याय ३ श्लोक २२६ में लिखा है कि कि जो पाप अज्ञान से होता है वह प्रायश्चित से दूर होता है, अगर जो जान सूक्त कर पाप किया जाता है वह प्रायश्चित से दूर नहीं होता, श्लोक २९४ से ३०६ तक में लिखा है कि जिस पाप का प्रायश्चित नहीं कहा गया है उसे देशकाल के अनुसार करना, और श्लोक ३२० में लिखा है कि जो पाप शास्त्र में नहीं है उसकी शुद्धि चान्द्राथण वत से होती है। मनुस्मृति अध्याय ११ श्लोक ४५ में लिखा है कि अनजाने पाप का प्रायश्चित होना है कोई २ जाने का भी कहते हैं, श्लोक १९० में लिखा है कि जो पापों का प्रायश्चित नहीं करते उन

को न छुये। चान्द्रायण ब्रत के बास्ते देखो मनुस्मृति अध्याय ११ रलोक २१७-२१८, याज्ञवल्क्य समृति अध्याय ३ रलोक ३२४, अत्रिस्मृति रलोक ११०, पाराशर स्मृति अध्याय १० रलोक २ और वशिष्ठ स्मृति अध्याय २३ रलोक ४०-४१।"

अहिंसा ही वैदिक कर्म है, हिंसा वैदिककर्म नहीं है यथा:-

अहिंसा वैदिकं कर्म ध्यानमिन्द्रिय संयमः। तपो ऽ थ गुरु शुश्रुषा कि श्रेयः पुरुषं पति १। हुति अनुशासन पर्वे अध्याय ११३।

नोट—इस प्रमाण से वेदों में जहां हिंसक कर्म है वह वेद कथित नहीं कहे जायँगे।

जो मतुष्य कर्म वचन मन से हिंसा करते हैं वह दुख से किस प्रकार छूट सकते हैं यथाः—

> कर्मणा मनुनः कुर्वन् हिंसा पार्थिव सत्तम । वाचा च मनसा चैव कथं दुःखात्प्रमुच्यते ३ । पूर्वं तु मनसा त्यत्तवा तथा वाचा ऽ थ कर्मणा । न भक्षयति यो मांसं त्रिविधं स विमुच्यते ८ । दोषास्तु भक्षणे राजन्मांसस्ये ह निवोधमे १० । इति अनुशासन पर्व अध्याय ११४ ।

जितने धर्मशास्त्र हैं सब ने खहिंसा का ही प्रतिपादन किया है यथाः—

> अहिंसा तव निर्दिष्टा सर्व धर्मानुसंहिता १९। इति अनुशासन पर्व अध्याय ११४।

नोट-इस प्रमाण से थर्मशास्त्रों में जहां रं हिंसात्मक श्लोक आये हैं वह तत्तदिषि कृत नहीं कहे जायेंगे।

धार्मिक पुरुषों को मधु मांस और मद्य का खाना जन्म-पर्यंत छोड़ना आवश्यक है यथाः—

मधु गांस निरहत्येति माह्यैवं रहस्पतिः १५ ।
मधु गांसं च ये नित्यं वर्जयंतीह धार्मिकाः ।
जन्म प्रभृति षद्यं च सर्वे ते सुनयः स्मृताः ७९ ।
इति श्रनुशासन पर्वे श्रध्याय ११५।

नोट - मधु !! मांस और मद्य से किसी अंश में मतुष्य को बतित बनाने में कमजोर नहीं है। वैष्याव इस पर ध्यान दें, मधु जो मगवत् को खिलाई जाती है और पीछे भगवद्भक्त खाते हैं, इससे भगवत् को मांस खवाना सिद्ध होगया, अवएव विचार-श्रीत वैष्याव मधु का भगवत्कर्म में त्याज्य करें। क्योंकि मधु स्रांस न खाने को ही धर्म कहते हैं, (यर्जयेन्सधुमांसानि धर्मोद्धत्र विधीयते ६३ इति अनुशासन पर्व अध्याय ११५) अन्यथा अधर्म है।

मनुष्य को जन्मपर्यंत मासर में अश्वमेध यज्ञ का जो फल मिलता है वह फुल मांस न खाने से मिलता है यथाः—

मासि मास्यश्वमेधेन यो यजेत शतं समः १६।

इति अनुशासन पर्वे अध्याय ११५।

अहिंसा ही सब धर्मों से बड़ा धर्म है यथाः—

ऋहिंसा परमो धर्मस्तथा ऽ हिंसा परं तपः। ऋहिंसा पर्मं सत्यं यतो धर्मः पवर्तते २५। इति ऋतुशासन पर्व ऋध्याय ११५।

श्चिति परमो धर्मस्तथा ऽ हिंसा परो दयः। श्रिहेंसा परमं दानमहिंसा परमं तपः ३८। श्रिहेंसा परमो यज्ञस्तथा ऽ हिंसा परं फलम्। श्रिहेंसा परमं मित्रमहिंसा परमं सुखम् ३९। सर्व यज्ञेषु वा दानं सर्व तीर्थेषु वा ऽऽधुतम्। सर्वदान फलं वा ऽ पि नैतत्तुत्यमहिंसया ४०। श्रिहेंसस्य तपो ऽ क्षयमहिंस्रो जयते सदा। श्रहिसा सर्वे भूतानां यथा पाता यथा पिता ४१। इति अनुशासन पर्वे अध्याय ११६।

नोट-३९ ऋोक से यह बात निकलती है कि हिंसा वाला यज्ञ न करे।

मांस तृगा काष्ठ पत्थर बादि से पैदा नहीं होता किन्तु किसी जीव की देह काटने से पैदा होता है यथाः—

> न हि मांस तृणात् काष्टादुपलाद्वापि जायते । हत्या जंतुं ततो मांसं तस्मादोषस्तु भक्षणे २६ । इति अनुशासन पर्वा अध्याय ११५ ।

मांस देवतावों का भोजन नहीं है,राज्ञसों का भोजन है यथाः-

स्वाहा स्वघा ऽ मृतभुजो देवाः सत्यार्जव वियाः । क्रव्यादान् राक्षसान्विद्धि जिह्यानृत परायणान् २७।

इति अनुशासन पर्वे अध्याय ११५।

नोट - बेद शास्त्र श्रौर पुरायों में वाममार्गी धूर्त ब्राह्मणों ने श्रपने खाने के वास्ते देव श्रौर पितृ को मांस खाना लिख मारा है। यदि मांस खाने वाले मांख न खायँ तो घातक लोग पशुश्रोंको क्यों मारें यथाः - यदि चेत्लादको स्यान्न तदा घातको भवेत्। घातकः स्नादकार्थाय तद्धघातयति वै नरः ३१।

इति श्रनुशासन पर्वा श्रध्याय ११५।

जो मनुष्य दूसरे के मांस से अपने मांस को बढ़ाने की इच्छा करता है वह बड़े खराब नरकों में बास करता है यथा:--

स्वमांसं पर मांसेन यो वर्धियतुं मिच्छिति । चिद्रग्न वासो वसति यत्र तत्राभिजायते ३६ ।

इति अनुशासन पर्व अध्याय ११५।

स्वामांसं परमांसेनयो बर्धयितुमिच्छेति । नास्तिक्षुद्रतरस्तस्मात्सवृशंसतरो नरः ११ । इति स्त्रनुशासन पर्वे स्त्रध्याय ११६ ।

मांस भन्नण में दोष है इस वास्ते मांस न खाय यथाः—

इदन्तु खलु कौन्तेय श्रुतमासीत्पुरा मया। मार्कडेयस्य बदतो ये दोषा मांस मक्षरो २८। इति अनुशासन पर्व अध्याय १२५।

पशु के घातक यथाः-

धनेन क्रविको हन्ति खाद्कः चोपभोगतः। धातको बध बंधाम्यामित्येष त्रिविधो बधः ४०। श्राहर्ता चानुमंता च विशस्ता क्रय विक्रयी। संस्कर्ता चोपभोगता च खादकाः सर्व येवते ४९।

इति अनुशासन पर्वे अध्याय ११५। 🕂

नोट--- अनुमन्ता विशसिता निहंता क्रय विक्रयी। संस्कर्ता चोपहर्ता च खादकरचेति घातकाः ५१।

इति सनुस्मृति श्रध्याय ।।

मांस का न खाना ही धर्म है यह बेद का कहना है यथाःमांसस्या ऽ पक्षणो धर्मो विशिष्ट इति नः श्रुति ४३।ऽ
इति अनुशासन पर्व अध्याय ११५।

+ पृष्ठ २१ भी देखो।

5 ३८ पृष्ठ की ११ पंक्ति से ३९ पृष्ठ के अंत तक देखी, २३ पृष्ठ की १३ पंक्ति से २४ पृष्ठ की ७ पक्तितक देखी, १२ पृष्ठ का ५६ रखीक देखी। जी बेद शास्त्र पुराण श्रीर सूत्रों में हिंसा दिखाइ देती है वह वाममार्गी धूर्त ब्राह्मणों की मिलाई है इसके परिचय में "देवीविल्पाखण्ड" देखी।

प्शु वातक महापापी होता है यथाः—

खादकस्य कृते जंतून्यो हन्यात्युरुषाथमः।
महादोषतरस्तत्र घातको न तु खादकः ४६।

इति अनुशासन पर्वे अध्याय ११५।

संसार में प्राण से प्रिय श्रीर बस्तु नहीं है इस वास्ते मनुष्यों को जीवों पर दया करना चाहिये यथाः—

नहिं पाणात्पिय तरं लोके किश्च न विद्यते। तस्पादयां नरः कुर्याद्यथा ऽऽत्यनि तथा परे १२।

इति अनुशासन पर्वे अध्याय ११६

मांस खाने वाला महापापी होता है, और मांस के छोड़ने में पुण्य होता है क्यों कि मांस बीर्यसे पैदा होता है यथाः—

> शुक्राच तात संभूतिभासस्ये इ न संशयः । भक्षाये तु महान्दोषो निष्टत्या पुरुषमुच्यते १३ ।

> > इति अनुशासन पर्व अध्याय ११६।

अहिंसा ही धर्म का लच्चण है यह धर्मविन परिडत कहते हैं यथा:— अहिंसा लक्षणो धर्म इति धर्म विदो विदुः २१। इति अनुशासन पर्श अध्याय ११६।

पाण दानात्परं दानं न भृतं न भविष्यति । नहात्मनः पियतरं किंची दस्तीह निश्चितम् २६ ।

इति ऋनुशासन पर्वे ऋध्याय ११६।

मांस शब्द का अर्थ यथाः -

मांसं च भक्षयते यस्माद्धश्रयिष्येतमप्यहम्। एतन्यांसस्य मांसत्वमनु बुद्धचस्य भारत ३५।

इति महाभारत अनुशासन पर्व अध्याय ११६।

🔌 अथ श्राद्धवित निषेध 😂

मांस से श्राद्ध ऋधर्मी करते हैं श्रीर श्रन्न फूल फलादिसे श्राद्ध धर्मात्सा करते हैं यथा:—

> देशकाले च संप्राप्ते मुन्यन्नं हरि दैवतम् । श्रद्धया विधिवत् पात्रेन्यस्तं कोमधुकक्षयम् ५ । देवर्षि पित्ं भूतेभ्यः झात्मने स्वजनाय च । अन्नं संविभजन पश्येत् सर्वे तत्पुरपात्मकम् ६।

न द्वादामिषं श्राद्धे न चाद्याद्धमं तत्वित्।
मुन्यन्नेः स्यात् पराभीतिर्यथा न पशु हिंसवा७।
नैताहशः परोधमों नृतां सद्धर्ममिच्छताम्।
न्यासो दंडस्य भूतेषु नोवाक्त्वाय जस्ययः ८।
तस्माद्धदेवोपपन्नेन मुन्यन्ने नापि धर्मवित्।
संतुष्टो ऽहरहः कुर्यान्नित्य नेमित्तिकीः क्रियाः ११।

इति भागवत स्कंध ७ श्रध्याय १५।

क्रयोदहरहः श्राद्धमन्नाद्ये नोदकेन वा । पयोम्दा फलौर्वापि पितृभ्यः पीति मावहन् ४ ।

इति मत्स्य पुराण श्रध्याय १६।

नोट-मनुस्मृति अध्याय ३ श्लोक ८२ श्रीर पद्मपुराण सृष्टि खंड अध्याय ९ श्लोक ७५ में भी ऐसा ही है जैसा कि ४ श्लोक में है। मार्कंडेय पुराण अध्याय २८ श्लोक ९ में लिखा है कि योनियां में भी पितरों को जल श्राद्ध पहुँचता है। पूर्व में श्राद्ध न करें यथा "पूर्वेषु करतोयाया न देयं श्राद्ध मुच्यते १० इति ब्रह्मपुराण अध्याय १११"। पितृ यझं करिष्यन्ति दंभार्थं ब्रह्मणाः कली ३० इति पद्म पुराण किया योग सार खंड अध्याय २६। श्राद्ध में अत्र देवे यथाः— श्रुणुयाच्छावयेच्छाद्धे त्राह्मणान्यो पहामुने । श्रक्षयमन्त दात्तं च पितृ णामुपतिष्ठति ५३।

इति शिवपुराण उमा संहिता ऋध्याय ११।

जब कि पितृ कार्य और नैदिक कर्म करने वाले को अहिंसक होना चाहिये, तो फिर मांस का पिंड पितरों को कैसे देसकते हैं यथा:-

> युक्ता क्षमा द्याभ्यां च क्षांत्या युक्तश्च तत्विद् । ब्रहिंसा हित चित्तश्चमाईचे च तथास्थितः ७ । ब्रह्मचार्य समायुक्तस्त्रयो योग समन्वितः । युक्तः स पितृ कार्येषु युक्तो वैदिक कर्मषु ८ ।

> > इति पद्मपुराण सृष्टि खंड ऋष्याय ३२।

नोट-योग में पहिले यम लिखा है, और यम में पहिले अहिंसा लिखा है-इस प्रमाण से पितृ को मांस का पिंड देने वाले पाखंडी हैं, और ऐसा श्राद्ध करानेवाले पण्डित इन्द्री लोलुप हैं।

जो ब्राह्मण पितरों को रोज तर्पण नहीं करता और संध्या नहीं करता वह अपने पितरों को नरक में पटकता है यथाः तर्पणेश्च विनिर्मुकः पितृशामेव नित्यणः । पितृ हानरकं याति संध्या हीनस्तु विव हा १०।

इति पद्मपुराण सृष्टि खरड अध्याय ४०। जो पितृ भक्त नहीं होते वो नरक को जाते हैं यथाः--

पित् भक्ति विहीनाये दिने तिष्ठति मानवाः। तायत्करूप सहस्रं तु तिष्ठंति नरके जनाः ९६।

इति पद्मपुराण क्रिया योग सार खण्ड अध्याय ३।

नोट - जो श्राद्ध कर्ता और भोक्ता श्राद्ध के दिन मैथुन करता है

तो उसके पितृ १ माह तक ग्रुक (वीर्य) में रहते हैं,

श्रीर जो पुरुष मैथुन करके श्राद्ध में आहार करता है

तो उसके पितृ एक मास तक रेत मूत्र भन्नण करते

हैं, इससे श्राद्ध में १ दिन पहिले ब्राह्मणों को निमन्त्रण
देना चाहिये देखो मार्कण्डेयपुराण श्रध्याय ३२ से ३४ तक। यदि

उस रोज स्त्री वर्जित ब्राह्मण न मिले तो श्रभ्यागत यति आदि

को ले, देखो उक्त ३२ से ३४ श्रध्याय तक के बीच में ३५ वां श्लोक।

राजश्यामा कश्यामाकौ तद्वच्चैव प्रशातिका। चीवाराः केशकराश्चैव वन्यानि थितृ तृप्तये ९। बवजीहि स गोधूम तिल मुद्राः स सर्पयाः । पियंगवः कोद्रवाश्च निष्यावाश्चाति शोभताः १० । इति मार्कण्डेय पुराग अध्याय २९ ।

अर्थ-समाराज, स्यामक, पसाइ के चावल, नीवार, पौषकल, ये अन्न पितरों को परम प्रसन्नदायक हैं ९। इनके अतिरिक्त यव, जीहि, गेहूं, तिल, मूंग, सरसों, प्रियंगू, कोविदार, निष्याव भी अत्यन्त तृप्न जनक है १०।

> नमस्ये ऽ हं पितृ ृत्वैश्यैरच्येते सुवि ये सदा । स्यकर्माभि रतैर्नित्यं पुष्प धृपान्न वारिभिः २२ । इति मान्नेण्डेय पुराण अध्याय ९३।

श्चर्थ-श्चपने कर्म में श्चाराक्त वैश्यगण पृथिवी में जिसको पुष्प धूप श्चन्न श्चौर जल द्वारा संतुष्ट करते हैं उन पितरों को नमस्कार करता हूँ २२।

सोगस्य ये रिष्पिषु ये ८ की विवे ,

• शुक्के विमाने च सदा बसंति ।

तुष्यन्तु ते ८ स्मिन्पितरो ८ न्नतोये,

र्गन्धादिना पृष्टिमितो बजन्तु ३१ ।

इति मार्कण्डेयपुराण अध्याय ६३ ।

ऋर्थ-जो सदा चंद्रमा की किरणों में, सूर्य विव में. और शुक्त विमान में वास करते हैं वह पितृगण मेरे द्वारा तृप्त हों और वह अस्र जल तथा गंधादि द्वारा पुष्टि को प्राप्त हों ३१।

ते ऽ स्मिन्समस्ता मम पुष्प गंध,
धूपान्नतोयादि निवेदनेन ।
तथाग्नि होमे न च यांतु तृप्तिं,
सदा पितृभ्यः मणतो ऽ स्मितेभ्यः ३७।

इति मार्करडेयपुराण अध्याय ९३।

अर्थ-वह संपूर्ण पितृगरा मेरे पुष्प गंध धूप अन्न और जलादि निवेदन तथा अग्नि होम द्वारा सुकते तृप्त हों, और मैं सदा उन पितरों को प्रशास करता हूँ ३७।

पितर ब्रह्मचारी होते हैं पुनः शौचाचारी भी हैं यथा:-

श्रद्गोधनाः शौचपराः सततं ब्रह्मचारिणः । न्यस्तशस्त्रा महाभागाः वितरः पूर्वदेवताः १९२ ।

इति मनुस्मृति ऋध्याय ३।

श्रीर बद्धचारी को प्राणिहिंसा मांस मधु खाना निषेध है यथाः— षर्जयेन्मधुमांसं च गंधं मार्व्यं स्मान्स्रियः । शुक्तानि यानि सर्वाणि प्राणिनां चैवहिंसनम् १७७। इति मनुस्मृति अध्याय २।

नोट-याज्ञवल्क्यस्मृति अध्याय १ श्लोक ३३ में प्रायः ऐसा ही है।

रात्रि में श्रीर दोनों सन्ध्यावों में श्राद्ध नहीं करना चाहिये यथाः—

रात्रौ आदं न कुर्वीत राक्षसी कीर्तिता हि सा। सम्ध्ययोरुभयोश्रैव सूर्ये चैवाचिरोदिते २८०। इति मनुस्मृति अभ्याय ३।

१ नोट—लघुहारीतस्मृति स्रोक १०२ और वृहद्विष्णु स्मृति अभ्याय ७७ स्रोक ८ में प्रायः ऐसा ही है। लघुहारीतस्मृति स्रोक १०३ में लिखा है कि प्रहणमें किसीसमयमें भी श्राद्ध करनेसे अचय फल मिलता है। अत्रिक्ष्मृति स्रोक ३५७-३५८ में लिखा है कि जो गृहस्थ कन्या के सूर्य (कुवाँर) होने पर श्राद्ध नहीं करता है पितरों की लंबी स्वास से उसका धन पुत्र और कुल नष्ट हो जाता है आगे ३६० स्रोक तक देखो। गया में श्राद्ध करने का विशेष फल है देखो लिखितस्मृति स्रोक १२ और विसन्टरुसृति अध्याय ११

ऋोक ३९। विवाही हुई स्त्री से विवाह करनेवाले बाह्मण को

श्राद्ध में न खवावे ऐसा मह्मस्तृति अध्याय ३ श्लोक १६६ में लिखा है । अत्रिस्मृति श्लोक ३४४ में लिखा है कि हिंसक ब्राह्मणको श्राद्ध में न ले।

२ मोट-जब कि मनुस्मृति अध्याय ४ श्लोक ६६ में लिखा है कि "म्रेत धूमो वर्ज्य" (५८ पृष्ठ का ६९ श्लोक भी देखों) याने मुदें की धुंवा को वर्ज दे और श्लोक ११६ में लिखा है कि जाह्मण रमसान के समीप (वेद पाठ न करें) श्लाह्म न ले। तो जाह्मणादि जो मनुष्य, मुदें को खाते हैं उनको क्या कहा जायगा। और मुद्री उसको कहते हैं कि जिस जीवधारी प्राणी के शरीर से प्राण वायु निकल गई हो चाहै वह मनुष्य हो वा पशु हो वा पन्नी मछली आदि कोई भी हो।

न श्राद्धे ह्यामिषं देयं पितृणां च कदाचन ।
न चा SS मिषाशिनः पित्रये यष्ट्वयाः श्राद्ध कर्मणि५५।
न च मांसाशिनः शैवाः शाक्ताश्चापि ह्यवैदिकाः ५६।
ना SS मिषं न मधु मोक्तं खड्गपात्रं न चैव हि।
नैकादश्यां प्रकर्तव्यं न तिर्यक्षुण्डू धारणम् १३६।

इति नारदपञ्चरात्रान्तर्गत वृहद्बह्यसंहिता पाद ४ श्रध्याय ४ ।

## ब्रह्मागड पुराण।

श्रिप च—
गन्य पृष्पैश्च घूपैश्च जपाहुतिभिरेव च ४७।
फत्तम्ता नमस्कारैः पितृणां प्रयतः श्रुचिः।
पृजां कृत्वा द्विजान्पश्चात्पृजयेदन्न संपदा ४८।
श्रुना प्रकारान शुचीन साधृन्,

संबीक्षते नो स्पृशंश्वापिद्यात् ८४। इति मध्यभाग उपोद्धातपाद् अध्याय ११।

पुष्पाणां च फलानां च भक्ष्याणामन्नतस्तथा।
अग्रमुद्धभृत्य सर्वेषां जुहुयाद्धन्यवाहने ३७।
भक्ष्यमन्नं तथा पेयं मूलानि च फलानि च।
हुत्वाञ्जनौ च ततः पिंडान्निवपेहिंसणा मुखः ३८।
इति मध्यभाग उपोद्धातपाद अध्याय १२।

विधि पूर्वक अन्न का ही पिंड श्राद्ध में दे यथाः—
श्राद्धे सङ्कल्पितं चानं तस्मै दत्तं विधानतः ३२।+
इति वाराह पुराण अध्याय १८६।

<sup>+</sup> मृतमश्रोत्रियं श्राद्धं मृतो यज्ञस्वद्विणः ८४। इति महाभारत वनपर्वे अध्याय ३१३।

मनुष्य असही से श्राद्ध करें और श्राद्ध शब्दका अर्थ भी यही । होता है यथा:—

> यथा संभिवनाऽसेन श्राद्धं श्रद्धा समन्वतः २०। अ इति श्रद्धपुराण श्रध्याय १११।

अन आदं ततः हुर्याद्याद्यानिद्विजोत्तमे २२। इति गरुड़ पुराण उत्तर खण्ड अध्याय १५।

सर्वेषामेव दानानां शाद्ध दानं विशिष्यते ३६६। श्राद्धं छत्वा तु मृत्यों वै स्वर्ग लोके महीयते ३६०।

इति स्मिति। श्रु विशेष कर श्राद्ध में वर्ज्य यथाः— मत्स्य स्कर कुर्माश्च गावो वर्ज्या विशेषतः १०४। इति ब्रह्मपुराण अध्याय ११२।

परन्तु यह ध्यान रहें कि—रात्रि में श्राद्ध कभी भी न करें, इस का निषेध हैं यथाः— रात्रो श्राद्धं न कुर्वीत राज्ञसी कीर्त्तिता हि सा १। इति भविष्य पुराण ब्राह्मपर्वा अध्याय १८५।

८१ एष्ठ का २८० ऋोक भी देखो।

आद में फल फूल अन्नादि पित्रों को देना चादिये यथाः—

यानि तस्यैव भोज्यानि मृत्तानि च फतानि च ।
यानि कानि च भक्षाणि नवश्च रस संभवम् १९ ।
ज्ञारना यथा सुखं वाच्य भुद्धीरस्ते ऽपि वाग्यताः ।
ज्ञान्तिस्तं पवित्राणि जप्त्वा पूर्व जपन्तथा २० ।
ज्ञान्तिस्तं पवित्राणि जप्त्वा पूर्व जपन्तथा २० ।
ज्ञान्तिस्तं वृक्षास्य क्षेषञ्चवानुमन्य च ।
नदन्नं विकरेद्दभूषौ दद्याचापः सकृत् सकृत् २१ ।
सर्वमन्यभुपादाय सतितां दक्षिणा भुतः ।
छच्छिष्ठ सन्निधौ पिषडान् प्रद्यात् पितृ यज्ञवत्२२।
इति गरुड्पुराण पूर्वस्वरह अध्याय ९९ ।

सूप शाक फलानीक्षून पयोदधि घृतं मधु ६२। द्याननश्चेव वया कामं विविधं भोज्य पेयकम् । पद्यदिष्टिं द्विजेन्द्राणां तत्तत् सर्वविनिवेदयेत् ६३।

शातातपस्मृति श्लोक ९४ में लिखा है कि बिना शहण के रात में श्रीर दोनों संध्याश्रों में कभी भी श्राद्ध नहीं करना चाहिए। ८१ पृष्ठ की १३ पंक्ति भी देखों। धान्यास्तिलांश्च विविधान् शर्करा विविधास्तथा । उष्णमन्नं द्विजातिभ्यो दातव्य श्रेयमिच्छता। अन्यत्र फल मूलेभ्यो पानकेभ्यस्तशैव च ६४।

इति कूर्म पुराण उत्तराई अध्याय २२।

अपिचालम्—

निकम्मे लोग ही जीवों के मांसका पिंड पित्रोंको देतेहैं यथा:-

बृहत्पाराशरस्तु मांसं निषेधतिः

 यस्तु प्राणि वधं कृत्या मांसैस्तर्पयते ×िषतृ न् ।
 सविद्वांश्चन्दनं दग्ध्वा कुर्यादङ्गार विक्रयम् १।

## 🕸 वृह्त्पाराशरसंहिता ऋध्याय ५।

× ये तो सब ही आंख से देखते हैं कि पशुमें रेत मूत्र विष्टादि मल रहते हैं मांस खाने वाले के खाने में यह चीजें अवश्य आयेंगी और बृद्धहारीतस्मृति अध्याय ९ श्लोक २५९ में लिखा है कि जो अज्ञानता से भी रेत मृत्र विष्ठा खाय तो उसका प्रायश्चित करे, इससे पशु मांस खाना अवश्य निषिद्ध है, इसे निषिद्ध ! मनुष्य पितृ और देवता ही खाते हैं। क्षिप्त्वा कूपे यथा कश्चिद्वात आदातुमिच्छति । पतत्यज्ञानतः सोपि मांसेन आद्ध कृत्तया २ । इति निर्णयसिंधु तृतीय परिच्छेद आद्ध प्रकरण । भेत कर्मै किया अर्थात सरेहण सनस्य को जलाने स्वाह के

प्रेत कर्म किया, अर्थात् मरेहुए मनुष्य को जलाने आदि के बाद अशौचमें जो पिण्डादि दिये जातेहें वेभी मांस रहित दे यथा:-

दातव्योतुदिनं पिंडः प्रेताय भ्रुवि पार्थिव । दिवा च भक्तं भोक्तव्यस्मांसं मनुजर्षभ ११ । इति विष्णुपुराण अंश ३ अध्याय १३।

मांस खाने वाला गीघ होता है यथाः— गांसंग्रधः ६।

इति गरुड़पुराण पूर्वस्वयड अध्याय १०४।

## [दुर्मिल]

जब कर्म तजे जिनने अपने तब पाप अनेक करे न करे।
जब बोलत फूठ न लाज लगी तब आज कि काल मरे न मरे।
मिद्रा मितमंदिन पीय लियो जिनके मुख धूर भरे न भरे।
मिद्रा अरु मांस भखो जिनने मल को मुखमाहि धरे न घरे।
(नागर)

नोट-इस प्रमाण से पितृ देवता और मनुष जो मांस खाते हैं इन्हें मरने पर गीध होना चाहिये।

जो अनजाने में भी मांस खा ले तो वह प्रेत होता है यथाः— अज्ञानाद् अक्षयन् गांसं स प्रेतो जायते नरः ६०। इति गरुड़पुराण उत्तरखण्ड अध्याय २२।

नोटः -- देवता पितृ मनुष्यादि जो जानके मांस खायगा वह तो अवश्य ही महा प्रेत (भूत)और गीघ होगा इसमें संशय नहीं।

कित्युग में मांस से श्राद्ध विजित है यथाः— पृथ्वी चन्द्रोदयस्तुः— श्रक्षता गोपशुश्चैव श्राद्धे मांसं तथा मधु। देवराच सुतोत्पत्तिः कत्तौ पश्च विवर्जयेत्।

इति निगमोक्तेः। इति निर्णयसिन्धु कत्ति वर्ज्यं।

कित्रयुग में मधुपर्क पशु वय मांस का श्राद्ध निषेध है यथाः— देवराच सुतोत्पत्तिर्मधुपर्के पशोर्वधः । सांसादनं तथा श्राद्धे वानप्रस्थाश्रमस्तथा १४। इति वृहस्रारदीयपुराण पूर्वाखण्ड अध्याय २४। श्राग्निहोत्र मांस से श्राद्ध कित्युगमें वर्जनीय है यथा:— श्राग्निहोत्रं गवालंभं सन्यासं पत्तपैतृकम् । देवराश्च सुतोत्पत्तिः कलौपंच विवर्जयेत् ।

इति निर्णयसिन्धु किल वर्ज्यान्तरगत निगम का वचन। नोट- ३३ पृष्ठ की १ पंक्ति देखो।

पांच हजार वर्ष कितयुग जाने पर श्राद्ध तर्पण वोदोक्त कर्म पृथ्वी से डठ जांचने यथा:--

साधवश्च पुराणानि शंखानि श्राद्ध तर्पणे।

वेदोक्तानि च कर्माणि ययुस्तैः सार्द्धमेव च १३।

इति देवीभागवत स्कन्ध ९ ष्रध्याय ८।
वेदोक्तानि च पुराणानि शंखाश्च श्राद्ध तर्पणम्।
वेदोक्तानि च कर्माणि ययुस्तः सार्द्धमेव च १३,।
वैद्यावश्च पुराणानि शंखाश्च श्राद्ध तर्पणम्।
वेदाग्नि च शास्त्राणि ययुस्तैः सार्द्धमेव च १४।
सत्त्रश्च सत्त्रं धर्मश्च वेदाश्च ग्रामदेवताः।
व्रतं तपस्यानशनं ययुस्तैः सार्द्धमेव च १५।

इति ब्रह्मवैवर्तपुराण प्रकृति खरड अध्याय ७।

कलौ दश सहस्राणिहरिस्तिष्ठतिमेदिनीम् । देवानां प्रतिमा पूज्या शास्त्राणि च पुराणकम् ३२। तदद्धमि तीर्थानि अगंगादीनि सुनिश्चितम् । तदर्द्धग्रामदेवाश्च वेदाश्च विदुषामि ३३। इति ब्रह्मवैवर्त पुराण श्रीकृष्ण जनमखण्ड अध्याय ९०।

इससे इस वक्त जो बाह्यण श्राद्ध यज्ञ करता है वह दूसरे के दिखाने को पाखण्ड करता है यथाः—

पितृ यज्ञ करिष्यंन्ति दंभार्थे ब्राह्मणः कलौ ३०। इति पद्मपुराण कियायोगसारखंड अध्याय २६।

कत्तियुम में त्राह्मणादि वर्णां को मदिरा पीना मना है यथाः-

नाराश्वमेधी मद्यश्व कली वर्ज्य दिजातिभिः। ऽ

क्ष तीर्थ बासी महापापी भगेत्तत्रान्य बंचात् । तत्रैव SS चरितं पापमानत्याय प्रकल्पते ३५। इति देवीभागवत स्कन्ध ४ अध्याय ८

ऽ जिन रलोकों के नीचे अन्थ का नाम नम्बर नहीं है, तो नीचे जहां पर अन्थ का नाम निकले उसी अन्थ का वह रलोक मानना। नाट-शूद्र को वेदोक्त कर्मी का अधिकार ही नहीं है।

वर ऋतिथि और पितरों के वास्ते पशु का मांस किलयुग में विजेत है यथाः—

वरातिथि पितृभ्यश्च पश्रूपाकरण क्रिया।
पशु मारना हिंसा का यज्ञ और मांस का बेचना ये ब्राह्मण्क को निश्चय करके कलियुग में मना है यथाः—

शामित्रं चैव विपाणां सोम विक्रयणं तथा।

इति निर्णयसिंधौ तृतीय परिच्छेद कलि वर्ज्य अंक ८४।

कितयुग में श्राद्ध में मधु न देवे यथाः—

कलौ श्राद्धे मधु नैव देयम्।

कतियुग में श्राद्यता गौ (बिछिया) पशु मांस मधु ! यज्ञ श्राद्ध में न देवे यथाः—

> श्रक्षता गो पशुश्चैव श्राद्धे मांसं तथा मधु। देवराश्च सुतोत्पत्तिः कलौ पंच विवर्जयेत्।

इति निर्णयसिंधु चतुर्थ परिच्छेद श्राद्ध निर्णय श्रंक १ में श्राद्धदीपकलिका श्रोर मदनपारिजात का बचन ।

नोट-मृतक सृतक श्राद्धादि का अन्न खाके प्रायश्चित करना बाहिये, देखों ६१ पृष्ठ के श्लोक ४७-५९। 🕸

कलियुग में बेदों की नाश हो जायगा यथा:-

बेदा नश्यन्ति वै कलौ १७।

इति मत्त्यपुराण ऋध्याय ११४।

क्ष जो मनुष्य पाप करता है और उसका प्रायश्चित नहीं करता पुनः पश्चाताप भी नहीं करता वह दारुण कष्ट देनेवाले नरकों में जाता है देखो याज्ञवल्क्यस्मृति अध्याय ३ श्लोक २२१ और श्लोक २२ से २४ तक में लिखा है कि तामिस्न १ लोहशंकु २ महानिरय ३ शाल्मिल ४ रीरव ५ छड्मल ६ पृतिमृतिक ७ कालस्त्रक ८ संघात ९ लोहतोदक १० सविष ११ संप्रपातन १२ महा नरक १३ काकोल १४ संजीवन १४ महापथ १६ वीचि १७ अन्धतामिस्न १८ कुंभीपाक १९ असिपत्रवन २० और तापन ये २१ नर्क हैं। नरकोंके विषयमें आगे मनुस्मृति अध्याय ४ श्लोक ८८ से ९० तक। भागवत स्कन्ध ५ अध्याय २६ श्लोक७। ब्रह्मपुराण अध्याय २० श्लोक १ से ५ तक। नारवीयपुराण पूर्णभाग अध्याय १५। और शिवपुराण उमासंहिता ८ अध्यायसे १० अध्याय तक देखो।

तथाः—
किलयुग में बेदों का विनाश हो जायगा यथाः—
विनश्यन्ति ततः कलो १८।

इति ब्रह्मायडपुराण पूर्वभाग श्रमुषङ्गपाद श्रध्याय ३१ ।

नोट — इस समय टोदों का नारा हो गया, चारों बेदों की सब 
११७२ शाखा हैं जिनमें ९ शाखा वर्त्तमान में मिल रही 
हैं तिनका नाम भी नहीं है, सब शाखावों के नाम होते 
हैं। ये नवशाखा भी वाममागियों की नष्ट भ्रष्ट की हुई हैं, 
विचार किया जाय तो ये नव शाखा भी न होने ही में 
शुमार हैं इन शाखाश्रों से वर्णाश्रम का कोई धर्म कर्म 
नहीं चल सकता।

श्राद्ध का लक्षण या श्राद्ध शब्द का ऋथे यथाः—
श्रद्धया दीयते यस्मात् श्राद्धं तेन निगद्यते ।
इति पुलस्त्य वचनात् श्रद्धया श्रक्षाद्ये दानं श्राद्धं
इति वैदिक प्रयोगाधीन योगिकम् । इति श्राद्ध तत्वं।

इति शब्दकल्पद्रुम श्राद्ध शब्दान्तरगत ।

श्राद्ध में न लेने योग त्राह्म यथा:-

मद्यपो अन्द्रपत्ती सक्तो वीरहा दिवि पूपति: । त्र्यागारदाही कुएडाशी सोम विक्रियिगो द्विता: ३६। अप्परिवेत्ता तथा हिंस्रश्च परिवित्तिर्निराकृति:। पोनर्भव: कुसीदश्च तथा नक्षत्र दर्शक: ३७।+

इति कूर्म पुराण उत्तराई अध्याय २१।

श्रवैष्णवाश्च ये सर्व्वे श्राद्धार्हा न कदाचन ७। इति गरुड़ पुराण पूर्वा खण्ड श्रध्याय ९९। श्रचक्रधारिणां विषं यः श्राद्धे भोजयिष्यति । रेतो मूत्र पुरीषादि पितृभ्यः संप्रच्छति ७ ।

अ जो ब्राह्मण समुद्र पार गया हो नौकरी करताहो किसी प्रकार का पापी हो और चातुर्यता से सत्य बनाके मूठ बोलने वाला (वकीलादि) हो उसे श्राद्धमें न ले यथाः—

समुद्रां तरितो भृत्यः पिशुनः कूठ सान्तिकः ३२। इति ब्रह्माङपुराग् मध्यभाग उपोद्धातपाद अध्याय १९।

+ दानेन सुत्तभो धर्मो यममार्गः सुखावहः। दान पुरुयं विना वत्स्य न गच्छेद्धर्म मंदिरम् १०। इति गम्रुडपुराण उत्तर खरुड अध्याय १९। शङ्ख चक्रोध्वं पुर्व्हादि रहतो ब्राह्मणोधमः । सनीवनेव चार्यडालस्तर्व धर्म वहिष्कृतः ८ । तस्माचक्रादि संस्काराः कर्तव्या मुनि सत्तमः । चक्रलांछनहीनेन कृतं कर्मं च निष्फलम् ९ ।

इति पाराशरीय धर्मशास्त्र उत्तरखर्ड ऋध्याय १।

श्रवैष्णवास्तु ये विषाः पाखण्डास्ते नराधमाः । तेषां तु नरके वासः कन्प कोटिशतैरिष २५। श्रवक्रधारी यो विषो बहु वेद श्रुतोऽिष वा । सजीवस्रेव चाण्डालो मृतो निरयमास्र्यात् २७। तस्मात्तापादि संस्काराः कर्तव्या धर्मकांक्षिणा । श्रयमेव परो धर्मः । प्रधानः सर्व कर्म्मणाम् २८।

इति वृद्धहारीतस्मृति धर्मशास्त्र अध्याय १।

अवैष्णवस्तु यो विषः सर्व धर्म युतोऽपिवा । स पाखण्डेति विज्ञेयः सर्व कर्म नाईति ३२ ।

<sup>‡</sup> मुक्तिद्वारमितो नास्तिः विनाचक्राङ्क धारणम् १०९। इति नारद्वञ्चसत्रान्तर्गत वृहद्बद्वसंहिता पाद १ अध्याय२।

शङ्ख चक्रोध्वेपुएड्।दि रहिवं ब्राह्मणं नृप । यः श्राद्धे भोजयेद्विमः पितृणां तस्य दुर्गतिः ४२ । रुद्रार्चनं त्रिपुंड्स्य अधारणं यत्र दृश्यते । तस्क्षु (स श्रू)द्राणां विधिः शोक्तो न द्विजानां कदाचन४४।

क्ष निर्माल्यमशुभं प्रोक्तमस्पृश्यं हि कदाचन । विधिहोंष द्विजातीनां नेतरेषां कदाचन ७५ । शिवार्चन त्रिपुरेट्ंच शुद्राणांच विधीयते । त्वद्विधानामिदं येच विष्ठाः शिव परायणाः ७६ । ते वै देवलका झेयाः सर्व कर्म वहिष्कृताः ७७ ।

मवत्रतघरा ये च ये च तान् समनुष्रताः ।
पाखिष्डिनस्ते भवन्तु सच्छास्त्र परिपन्थिनः २९ ।
नष्ट शौचा मूढ धियो जटा भस्मास्थि धारिणः ।
विशंतु शिवदीत्तायां यत्र दैवं सुरासवम् ३० ।
इति भागवत स्कन्ध ४ अध्याय २ ।

इति वृद्धहारीतस्मृति धर्मशास्त्र अध्याय ८।

जटा धारण करने वाले को श्राद्ध में न ले, देखो अत्रिस्मृति रलोक ३४५ और मनुस्मृति अध्याय ३ रलोक १४१। प्रति लोगानु लोगानां दुर्गागण सु भैरवाः ।
पूजनीया यथाईण विस्व चंदन घारणम् ४५ ।
यक्ष राक्षस भूतानि विद्याधर गणास्तथा ।
चाणडालानामर्चनीया मद्य मांस निषेत्रणाम् ४६ ।
कदार्चनादृब्राह्मणस्तु सूद्रेण समतां व्रजेत् ।
यक्ष भूतार्चनात्सद्यश्वाणडालत्वमवाष्तुयात् ४७ । ×
न अभस्म घारयेद्विमः परमापद्वगतो ऽ पि वा ।

🗴 प्रेतान्भूत गर्णाश्चान्ये यजन्तेतामसा जनाः इति गीता१७।४।

कि तमसो भस्म रजसो गन्धः सत्वस्य मृतिका । तस्माद्भस्मादि भिनेंच्छेदेकान्ती शुद्धिमात्मनः ४४ । इति नारदपद्धरात्र भरद्वाज संहिता अध्याय है । दैवे पित्र्ये न वै पूज्या जटा भस्मादि धारिणः ६२ ।

इति नारदपञ्चरात्रान्तरगत बहद्ब्रह्मसंहिता पाद् ४ ऋध्याय ४।

विष्राणामूर्द्धपुरड्रंस्यात्तिलकंतु महीभृतः।
पहाकारन्तु वैश्यानां श्रृद्वाणां वै त्रिपुरड्कम् १५।
ब्राह्मणः कुलजो विद्वान् भस्मधारी भवेद्यदि।
वर्जयेत्ताहशं देवी मद्योच्छिष्टं घटं यथा १९।

महाहैविभृयाची वै स सुरायो भवेद्ध वस् ४८।
तिर्यक पुण्ड्धरं विश्रं पहाकार घरं तथा।
श्वपाकेमिव नेक्षेत न संभाषेत कुत्रचित ४९।
-तस्माद्दिजाति भिर्धार्यसूर्ध्वपुण्ड्ं विधानतः।
सृदा छुश्रेण सततं सांतरालं मनोहरस् ५०।
आखंहोमस्तथाः दानं स्वाध्यायः पितृ तर्पण्म्।
भस्मो भवति तत्सर्व्यसूर्ध्वपुण्ड्ं विना कृतम् ६०।
ऊर्ध्वपुण्ड्ं विना यस्तु आखं कुर्धीत् सद्विजः।
सर्भे तद्राक्षसैनीतं नरकं चाथि गच्छति ६१।

त्रिपुराड्ं शूद्र कल्पानां शूद्राणां च विधिस्तथा। त्रिपुराड्ं धारणाः विष्ठः पतितः स्यान्न संशयः २०। इति पद्मोत्तरखराडे अध्याय २२५। उद्धपुराड्ं द्वेरेखं जलाटे यस्य दृश्यते। चाराडालोपि विशुद्धातमा कूच्य एव न संशयः २२।

इति पद्मो पातालखंडे अध्याय ७९। अपने आश्रम के अनुसार चिन्ह को धारण करें, जो अपने आश्रम के चिन्ह को धारण नहीं करता वह प्रायश्चिती के तुल्य है और वह आश्रमी नहीं कहाता इति दक्तस्मृति अध्याय १ श्लोक १३-१४। उद्ध्विपुष् विहीनं तु यः श्राद्धे भोनयोद्धनम् । अहनन्ति पितरस्तस्य विष्मृत्रं नात्र संशयः ६२ । तस्मात्तुः सततं धार्यमूर्ध्वपुड्ं द्विजन्मना । धार्ययेनन तिर्यक्षपुण्ड्मापद्यपि कदाचन ६३ । तिर्यक्षपुण्ड् धरं विष्मं चाण्डालामिव संत्यजेत् । सो ऽ नई: सर्व कृत्येषु सर्व लोकेषु गर्हितः ६४ । इति वृद्धहारीतस्मृति धर्मशास्त्र अध्याय २

श्राद्ध में न लेनेयोग्य ब्राह्मण यथाः— परमापदागतो ऽ पि न श्रुञ्जीत होर्दिने । न तिर्यग्यारयेत्पुणड्ंनान्यदेवं प्रपृजयेत् २६० । वैष्णवः पुरुषोयस्तु श्रिय ब्रह्मादि देवताः । प्रण्मेताचयेद्वा ऽ पि विष्टायां जायते क्रिमिः २६१ । †श्रवैष्णवः स्याद्यो विष्यो बहुशास्त्र श्रुतो ऽ पि वा । स जीवन्नेत्र बांडालो मृतः स्वान ऽ भिजायते २७८ ।

<sup>†</sup> असाधु ब्राह्मण को जो भोजन कराये जाते हैं उनको वि-द्वान लोग मेर रुधिर मांस मजा और हुई। के समान मसकते हैं, देखों मनुम्मृति अध्याय ३ स्टोक १८२। मांस खाने वाले का अब न खाय, मनु ४ १२१३ और याज्ञवल्क्य १। १६७।

§शंख चक्रोध्वंपुराड्रादि रिष्तं ब्राह्मणाधमम् ।
पूजियच्यति यः श्राद्धे सर्वं कर्मस्य निष्फलम् २८२ ।
तिर्यक्पुराड्रधरं विषं यः श्राद्ध भोजियच्यति ।
पितरस्तस्य यान्त्येव कालस्त्रं सु दावरणम् २८३ ।
नावैष्णवान्नं भुजीत द्यान्नावैष्णवं च ।
नार्वयेदितरान्देवान्न क्कितिर्यग्यारयेत्ततः ३०७ ।

§ "तम् न वांग धनुषांकित रामभक्तः १०।

यज्ञं चं तीर्थंगमनं पितृ देव सवँ, कुर्वन्ति कर्म शुभकं श्रुतयो बदन्ति । ये नांकिता धनुषरंविंफलं च सर्वं, ये चांकिता धनुः शरैश्च फलं सहस्रम् १७। तप्तं धनुः शरमिदं भुजयोः प्रकुर्यात् २१। तप्तं धनुश्शरमथोखलु तत्र होमे, प्रेम्नाकितं सु मनसा च गुकः प्रकुर्यात् । देशेषु चैब सकलेष्विप सर्वकाले, वर्णाश्रमाश्च सकलांकित पुण्य पुंजाः २५।

श्रीराम संस्कार विवर्जिता ये निष्युच्छ श्रृङ्काः पशवोनरास्ते। शक्ता न वेदा श्रमिवर्णितु यत्त्वत्तोमयाख्यातमविस्तरेण २६। इति पञ्च सर्गीय महारामायण श्रव्याय २। यह ४९ वां महा-रामायण का सर्ग है किन्तु कांड का नाम नहीं है, श्रीसीताराम प्रेस श्रयोध्या की छुपी।"

**अ** त्रिपुरख्र ।

न कुर्याचो विधानेन पितृ यज्ञं नराधमः। श्रज्ञाति क्रमणाद्विष्णोः पतत्योव न संशयः ३२८। इति वृद्धहारीत स्वृति धर्म्मशास्त्र श्रथ्याय ११।

"१ नोट — मनुस्पृति अध्याय ३ स्तोक १५२ में लिखा है कि मांस बेचने वाले को श्राद्ध में न खवावें। मनुस्पृति अध्याय ३ स्तोक १६४, अत्रिस्पृति स्त्रांक ३४४, उशनस्पृति अध्याय ४ स्तोक २९ और गौतमस्पृति अध्याय१५ अंकर में लिखा है कि हिंसक (हिंसा करने वाले-मांस खाने वाले) त्राह्मण को श्राद्ध में न खवावें। मनुस्पृति अध्याय ३ स्त्रोक १५९ उशनस्पृति अध्याय ४ श्लोक २८ और गौतमस्पृति अध्याय १४ अंक २ में लिखा है कि मद्य पीने वाले त्राह्मण को श्राद्ध में न ले। अनेक प्रकार के ब्राह्मण श्राद्ध में न लेने योग्य यदि जानता है तो मनुस्पृति अध्याय ३ श्लोक १३६ से श्लोक १८२ तक, याज्ञवल्क्यस्पृति अध्याय १ श्लोक २९२ से श्लोक २२४ तक, अतिस्पृति श्लोक ३४२ से श्लोक ३५० तक, उशनस्पृति अध्याय ४ श्लोक १९ से श्लोक ३४ तक, वृहद्यमस्पृति अध्याय ३ श्लोक३४ से श्लोक ३८ तक, और गौतमस्पृति अध्याय १५ अंक २ देखो।

२ इस समय श्राद्ध करने की पृथा होने के कारण मैंने श्राद्ध में न लेने योग्य ब्राह्मणों का उक्त स्मृतियों (धर्मशास्त्रों) से विशेष परिचय इस वास्ते दिया है कि जिसमें श्राद्ध कर्ताश्रीर उनके पितृ पुनः देवतायों का लोक परलोक में कल्याण हो। मेरा विशेष श्राद्ध कर्तायों से अनुरोध है कि वे उक्त स्मृतियों में लिखे अनुसार श्राद्ध में बाद्धणों से उचित वर्ताय करेंगे। स्मृति को ही धर्मशास्त्र कहते हैं-देखो सनुस्मृति श्रध्याय २ श्लोक १०। देव और पितर कार्य में मूर्स्त्र के खवाने के विषय में मनु श्रध्याय २ रखोक १५०-१४८, श्रध्याय ३ श्लोक १३२ से १३३, श्रोर श्रध्याय ४ श्लोक १८८ से १९१ तक देखो।" श्राद्ध में लेने योग्य ब्राह्मण यथा:—

जर्ध्वपुराड् घरं विशं चक्राङ्कित भुजं तथा।
प्रायिष्यति यः श्राद्धे गया श्राद्धायुतं लभेत् २८४।
शांखचक्रोर्ध्वपुंड्रदि धारिसां वैष्यावं द्विजम्। ऽ
भक्तया संपूजयेद्यस्तु दैवे पित्रये च कर्माता २८५।
कल्प कोटि सहस्राणि करुप कोटि शतानि च।
प्रयान्ति पितरस्तस्य विष्णुलोकं सु निर्मलम् २८६।

, ऽ ब्राह्मणः चित्रयो वैश्यः शूद्रो नारी तथेतरः । चकाचैरङ्कयेद्गात्रमात्मी यस्याखिलस्य च ५९ । इति नारदपद्धरात्र भरद्वाजसहिना ऋध्यात्र ३१ ऊर्कापुरेष्डु के विषय में ब्रागे का ४० श्लोक देखो । उद्ध्वंपुंड् घरं विषं तप्त चक्राङ्किता स कम् ।
श्राद्धे संपूज्येद्यस्तु गया श्राद्धायुतं लभेत् २८७ ।
तप्त चक्रेण विधिना बाहुमूलेन लाञ्छितः ।
पुनाति सकलं लोकं नारायण इवार्घाभत् २८८ ।
श्राविद्यो वा सिवद्यो वा चक्रशंखोध्वंपुंड् घृत् ।
श्राद्धायाः सर्व लोकेषु पूज्यमानो हरिर्यथा २८९ ।
श्राद्धे दाने ब्रते यज्ञे + विवाहे चोपनायने ।
चक्राङ्कित विभमेव पूजयेदितरान्न तु २९४ ।

मत शरीर विशस्य शङ्क चक्रादि लाब्छितम्।
न संत्यज्ञति देशेशः सत्यं सत्यं वदाम्यहम् ४८।
न तेन दुर्गति गच्छेचक्रं तत्र प्रशास्ति हि।
सर्प व्याव्य विषा चौर वारि अग्नि विश्चिकाः ९६।
चक्राङ्कितस्य नेच्छन्ति दुर्गति यम किंकराः।
श्मशाने मागधे देशे म्लेच्छ देशे ऽ न्त्यजां गणे ९७।

इति नारद्पञ्चरात्रान्तरगत त्रहद्बद्धा संहिता पाद १ ऋध्याय ५।

+ पाक यज्ञादि में शृद्ध को भी दान दें यथा --दान द्याचशुद्धो ऽ पि पाक यज्ञैर्याजेत च। चक्राङ्कितं सुनो विष: पङ्क्ति मध्ये तु भोजयेत् ।
पुनाति सकतां पिकं गंगे चोत्तर वाहिनी २९६ ।
इति वृद्धहारीतस्मृति धर्मशास्त्र अध्याय ११।
शाद्ध में लेने योग्य ब्राह्मण यथाः—

पुराण वेत्ता ब्रह्मज्ञः स्वाध्यायी जप तत्परः ८०। वह्म भक्तः पितृ परः सूर्य भक्तोथ वैष्णवः । ब्राह्मणो योग निष्ठात्मा विजितात्मा सुशीलवान् ८१ । योते तोष्याः प्रयत्नेन ८२ ।

इति पद्मपुराण सृष्टिखंड ऋध्याय ९ ।

"१नोट-श्राद्ध में खाने योग्य ब्राह्मण यदि पूर्ण रूप से जानना होतो मनुस्पृति अध्याय ३ रलोक १२८ से रलोक १४९ तक और रलोक १५३ से रलोक १८६ तक, याज्ञवल्क्य स्पृति अध्याय १ रलोक ११९ से रलोक १२१ तक, अत्रिस्पृति रलोक ३५२ से रलोक ३५५ तक, उरानस्पृति अध्याय ३ रलोक ११६ से रलोक ११७ तक और ४ अध्याय में रलोक ९ से रलोक १४ तक,

> भृत्यादि भरणार्थाय सर्वेषां च परिप्रहाः १४। इति त्रह्मपुराण ऋष्याय ११४।

वृहत्पाराशरीयधर्मशास्त्र अध्याय ५ श्लोक १५ से श्लोक २२ तक, प्रजापितस्मृति श्लोक ०० से श्लोक ०१ तक, और लघुआश्वलायन स्मृति आद्धोपयोगी प्रकरण श्लोक १५ से श्लोक २० तक देखो। उक्त स्मृतियोंके कहे अनुसार यदि आद्ध करता, ब्राह्मणों को आद्ध में भोजन न करायगा तो आद्ध कर्त्ता की और पितरों की अच्छी तरह दुर्गित होगी, और शरीर की महनत काम का नुकसान द्रव्य का नाश हाथ लोगा।

२ यदि श्राद्ध का फल और समय जानना हो तो मनुस्मृति श्राध्याय ३ श्लोक २०३ से श्लोक २=३ तक, याज्ञवल्क्य स्मृति श्राध्याय १ श्लोक २१० से श्लोक २१८ तक और श्लोक २६२ से श्लोक २६= तक, श्रात्रस्मृति श्लोक ३५० से श्लोक ३६२ तक, काल्यायनस्मृति खण्ड १६ श्लोक १ और १०, वचस्मृति श्राध्याय २ श्लोक २६, वशिष्ठस्मृति श्राध्याय ११ श्लोक ३३, और प्रजा-पितस्मृति श्लोक १७ से ३८ तक देखो।

३ यदि श्राद्ध करने का स्थान जानना हो तो ( और स्थान जानना ही चाहिये ) मनुस्मृति अध्याय ३ श्लोक२०७, याज्ञवल्क्य स्मृति अध्याय १ श्लोक २६१, अत्रिस्मृति श्लोक ५६ और ५९, अश्रास्मृति अध्याय ४ श्लोक १३ से श्लोक १६ तक, शङ्कस्मृति अध्याय ४ श्लोक २९ तक, लिखितहमित स्रोक १२,

बशिष्ठस्मृति अध्याय ११ रत्नोक ३९, और प्रजापतिस्मृति रत्नोक ५३ और ५४ देखो ।

४ श्राद्ध में किस किस चीज का निवेध होता है यदि जानना हो तो मनुस्मृति अध्याय ३ रलोक २३९ से ग्लोक २४२ तक, अत्रिस्मृति रलोक १५० से श्लोक १५४ तक, वृह्दिण्णु स्मृति अध्याय ६ रलोक १५४ तक, वृह्दिण्णु स्मृति अध्याय ९ रलोक १ से १८ तक, कात्यायनस्मृति खण्ड १० श्लोक ९ श्रीर १०, श्रीर वौधायनस्मृति प्रश्न २ अध्याय ८ रलोक २४ देखो ।

५ श्राद्ध कर्ता का धर्म और श्राद्ध की विधि जानना हो तो मनुस्मृति अध्याय ३ श्लोक १२२ से श्लोक १२७ तक, श्लोक १८७ श्रीर १८८, श्लोक २०२ से श्लोक २३५ तक, श्लोक २४३ से श्लोक २६५ तक याज्ञवल्क्यस्मृति अध्याय १ श्लोक २१७ से श्लोक २५४ तक, अत्रिस्मृति श्लोक ३९३ और ३९४, उशनस्मृति अध्याय ३ श्लोक ११४ और ११५, श्लोक १३४ से १३६ तक, अध्याय ५ श्लोक ८१, कात्यायनस्मृति खण्ड १६ श्लोक २३, लिखितस्मृति श्लोक १७ से श्लोक २४ तक और श्लोक १७ से श्लोक २४ तक और श्लोक १६५ तोक १६५० और गौतम स्मृति अध्याय १४ श्लोक १ देखो।

६ श्राद्ध में खाने वाले ब्राह्मण का धर्म जानना हो तो मनुस्मृति अध्याय ३ श्लोक १८८ से श्लोक १९१ तक, श्लोक २३६ से श्लोक २३८ तक, लघुहारीतस्मृति श्लोक ७५ से श्लोक ७८ तक ओर उरानस्मृति अध्याय ५ श्लोक ५ से श्लोक १० तक देखो।

७ श्राद्ध का संपूर्ण विवरण अच्छी तरह से आद्योपान्त जानना हो तो बम्बई श्रीवेंकटेश्वर प्रेस का छपा "धर्मशास्त्रसंग्रह" में श्राद्ध प्रकरण १८ वां देखो । मैं इस चितदानिषेध में श्राद्ध के विषयमें बहुत लिखता, परन्तु प्रन्थ बढ़ जाने के भय से कुछ थोड़ा लिख कर यही लिखता हूँ कि धर्म शास्त्रसंग्रह श्राद्ध प्रक रण देखे। ।"

शास में अर्ब्युराड् धारण करना आवश्यकीय है यथाः— संध्या काले अपे होमे स्वाध्यायेपित तर्पणे। आद्धे दाने च यज्ञे च धारयेद्ध्र्यपुंड्कम् १४। अर्ध्वपुण्ड्ं तु विशाणां संध्यानुष्ठान कर्मवत्। आद्धकाले विशेषेण कर्त्ता भोक्ता च न त्यजेत् १५। अर्ध्वपुंड्ं विद्योनस्तु कर्म यत्किचिदाचरेत्! तत्सर्वे निष्फलं याति इष्टापूर्विमपि द्विजाः १६। यच्छरीरं मनुष्याणामुध्यपुंड्ं विवर्जितम्। द्रष्ट्व्यं न हि तत्कार्यं समशान सदृशं हि तत् १७।ऽ

ऽ पद्मपुराण प्रतालखंड ऋव्याय ७९ स्लोक २३-२४ देखो।

श्रिकंद्रसूर्ध्वपृंहन्तु त्रिपुंह्ं यस्तु धारयेत्।
स जीवन्तेव श्र्द्रत्वपाश्च गच्छन्त्यसंशयम् २०।
कपाल दारु भस्मास्थि शक्ति पापाण धारिणः।
त्रिपुंड् धारिणं विष्रं चांडालिमव संत्यजेत् २१।
श्रम्रदंशं च शंखे च लिंग श्रूलादि धारणम्।
तिर्यक् पुंड् धरं विष्रं राजा राष्ट्रात्पवासयेत् २२।
तिर्यक् पुंड् धरो विष्रो यत्र तिष्ठति वै ग्रहे।
तदेशौ ऽ पावन भूतः श्मशान सह्यो भवेत् २३।
तिर्यक् पुंड् धरो विषः पंक्ति मध्ये स्थितो यदि।
सा पंक्तित्रह्महत्यायां युज्यते नात्र संशयः २४।
श्राह्मणः कुल यो विद्वान् तिर्यक् पुंड् धरो यदि।
तं गर्दभं समारोप्य राजा राष्ट्रात्यवासयेत् २५।
इति पाराशरीय धर्मशास्त्र उत्तरसंड श्रम्याय २।

'वैष्णवीं का जूठन खाने से करोड़ों जन्मों के पाप नाश हो जाते हैं यथाः—

> कोटि जन्मार्जितं पापं ज्ञानतो ऽ ज्ञानतोपि वा । सद्यः प्रत्याश्यते सृषां वैष्णवोच्छिष्ट मोजनात् १३।

> > इति पाराश्रीय धर्मशास्त्र उत्तरखंड अध्याय १०।"

अर्ध्वपुरव् तिलक को श्रच्छी तरह से सुधार के ख्बस्रती के साथ लगावे यथा:—

सान्तरान्तं प्रकृवीत पुंड्रं हरि पादा कृतम्। श्राद्धकाले विशेषेण कर्ता भोका च धारयेत् ६८।

इति वृद्धहारीतस्मति धर्मशास्त्र अध्याय ८। अर्घ्वपुरुड् को ऊँच नीच स्त्री आदि सबको लगाने का

अधिकार है यथाः —

स्त्रियो बेश्यास्तथा श्रुद्रा म्लेच्छा वा ८ न्त्यज जातयः। ऊर्ध्वपुंड्र घराः सर्वे नमस्या देवता इव ५७। × इति नारद पंचरात्रान्तरगत वृहद्ब्बद्ध संहिता पाद १ अध्याय१३।

यज्ञो दानं तपो होमः स्वाध्यायः पितृ तर्पणम् । वृथा भवति तत्सर्वमूर्ध्वपुंड्ं विना कृतम् ४३ । इति नारदीयपुराण पूर्वखंड अध्याय २६ ।

"नोट-परन्तु जो ऋतिथि बिना सन्मान पाये गृहस्थ के यहाँ

×चकायुघ धारण के विषय में १०२ पृष्ठ की २८५ श्लोक की विषय में १०२ पृष्ठ की २८५ श्लोक की

से लौट जाता है वह अपना पाप देजाता है और उसका पुग्य ले जाता है यथा:—

> श्रितिथिर्यस्य भग्नाशो गृहात्प्रति निवर्त्तते । स दत्वा दुष्कृतं तस्मै पुण्यमादाय गच्छति ३६ । इति ब्रह्मपुराण् श्रभ्याय ११४ ।

"नारदीयपुराण पूर्वभाग अध्याय २७ स्रोक ७२, विष्णुपुराण अंश ३ अध्याय ११ स्रोक ६८ और मनुस्मृति अध्याय ३ स्रोक ९९-१०० में भी ऐसा ही है।"

जो श्रतिथि श्रभ्यागत को गृहस्थ कोध दृष्टि से देखते हैं तो नर्क में उनके नेत्रों को जिनके बज्ज कैसे मुंह हैं ऐसे गीध कंक काक वटेरादि वल से उखाड़ते हैं यथाः—

यस्त्विह वा अतिथीनभ्यागतान् वा गृहपतिरसकृदुपगत-मन्युर्दिधच्चित्र पापेन चचुषा निरीचेतस्या वा ऽ पि निरये पाप हप्टे रिचिग्गी वज्रतुंडा गृधाः कंक काक वटाद्यः प्रसद्घोक्वला-दुत्यपाटयंति ३५ इति भागवतस्कन्ध ५ अध्याय २६।

धर्म की मृति जिसे कहते हैं वो अतिथि ही हैं यथा। — धर्मस्यात्मा ऽ तिथिः स्वयम् ३० इति भागवत स्कंध ६ अध्याय ७। जिस घर से निराश होकर अतिथि चला जाता है उसके यहां पितर १५ वर्ष तक नहीं खाते। जिसके गृह से श्रितिथि नि राश होकर लौट जाते हैं हजार बोक लकड़ी श्रीर मौ घड़े घी से होम करने पर भी उसका होम वृथा हो जाता है यथाः —

> श्चितिथिर्यस्य भग्नाशो महात्प्रति निवर्तते। पितरस्तस्य नाश्नंति दश वर्षाणि पक्च च ४५। काष्ठभार सहस्रेण पृतकुंभ शतेन च। श्चितिथिर्यस्यभग्नाशस्तस्य होमो निरर्थकः ४६।

> > इति पाराशर स्मृति अध्याय १।

जिसको धन, यश, आयु और स्वर्गलोक चाहने की इच्छा हो वो अतिथि का सत्कार करें और उसके खवाये बिना आप न खाय यथा:—

> न वै स्वयं तदश्रीयादतिथि यत्र भोजयेत्। धन्यं यशस्यमायुष्यं स्वर्ग्यं वातिथि पूजनम् १०६।

> > इति मनुस्मृति ऋध्याय ३।

अतिथि की अनेक वातों के विषय में देखो, हारीतस्मृति अध्याय ४ श्लोक ५७ से ५९ तक। राङ्कस्मृति अध्याय ५ श्लोक ७ व १३। पाराशरू स्मृति अध्याय १ श्लोक ४० से ६२ तक और श्लोक १०३-१०४। विशिष्ठस्मृति अध्याय ८ श्लोक ७-८। व्यास-

समृति अध्याव ३ श्लोक ३८। शातातपस्मृति श्लोक ५५। याज्ञव-ल्क्यम्मृति ऋथ्याय १ ऋोक १०७-१०८-१११। मनुस्मृति ऋथ्याय ३ स्रोक १५ से १२१ तक ।, हारीतस्मृति अध्याय ४ स्रोक ५६ में लिखा है कि जितने समय में गौ दुही जाती है गृहस्थ उतने समय तक अतिथि की बाट देखें, पहिले के बिना देखें हुए तथा बिना जाने हुए अतिथि के श्राने पर उसका सतकार करे।, उशनस्मृति अध्याय १ स्रोक ४० में लिखा है कि द्विजातियों का गुरु अग्नि, सब वर्णी का गुरु ब्राह्मण, पत्नी का गुरु स्वामी और सब मनुष्यों का गुरु अभ्यागत है, शंखस्मृति अध्याय ५ स्रोक ७ मी इसी तरह का है।, मनुस्मृति श्रध्याय ३ ऋोक ७२ में लिखा है कि जो गृहस्थ अत्रादि से देवता अतिथि सेवक आदि भृत्य पिता माता आदि गुरुजन और अपनी आत्मा इन पांचों को संतुष्ट नहीं करता वह जीता हुआ भी मुदें के समान है।, मनुस्मृति अध्याय ३ ऋोक ११४ में लिखा है कि नवीन विवाही हुई पतोहू (बहू) तथा पुत्री, वालक, रोगी और गर्भवती स्त्री को बिना विचार किए हुए अतिथि से पहिले खिलावै।, अतिथि किसे कहते हैं सो आगे दे-स्तिये। मनुस्मृति अध्याय ३ स्त्रोक १०२ में लिखा है कि केवल एक रात अन्य के वर में बसनेवाले ब्राह्मण को अतिथि कहते हैं। पाराशरस्मृति अध्याय १ ऋोक ४२ में लिखा है कि जो ब्राह्मण 🗪 ही गांव में बसनेवाला है उसको ऋतिथि समक्त कर ग्रहण न

करै जिसकी अनित्य स्थिति है वही अतिथि कहलाता है। मतुस्मृति अध्याय ३ श्लोक ११० में लिखा है कि ब्राह्मण के घर में
आये हुये चत्री, वैश्य, शूद्र, मित्र, स्वजन और गुरू अतिथि नहीं
कहे जाते।, पाराशरस्मृति अध्याय १ श्लोक ४०-४१-६२ में लिखा
है कि मित्र हो अथवा शत्रु हो मूर्ख हो अथवा पंडित हो जो वैश्वदेव
के अन्त में आवे वह अतिथि स्वर्ग में पहुंचानेवाला है ४०। जो
दूर से आया हो, थका हो और वैश्वदेव के समय उपस्थित हो
अथवा चार्खाल हो या पितृचातक शत्रु होवे,यदि वैश्यदेवके समय
आया हो तो वह अतिथि स्वर्ग में ले जानेवाला है ६२। शातालपस्मृति का ४२ श्लोक उक्त ४० श्लोक के समान है।"

श्राद्ध काल में भगवत को भोग लगाकर पितृ की दे यथाः— यः श्राद्ध काले हरिश्व ग्रुक्त शेषं। ददाति भक्तया पितृ देवतानाम्।

कि नास्ति विष्णु समं दैवं ५०।
इति वृहन्नारदीय पुराण पूर्वखण्ड अध्याय ६ ।
तत्वं जुरुसमंनास्ति न देवः केशवात्परः ९ ।
इति नारदीयपुराण पूर्वखण्ड अध्याय ३४ ।

ने नैव विग्रहास्तु तुलसी वि पिश्रा। नाकरुपकोटि पितरः सु तृप्ताः।

इति शब्दकल्पद्रुम श्राद्ध शब्दान्तर्गत ।

विष्णु का भोग लगा श्रम्न पितरों को दे। जो विष्णु को विना भोग लगाये देवताश्रों को समर्पण करता है वह मांस मदा सदृश होजाता है, इससे श्रम्न जल फल फुल भेवा आदि विष्णुकों भीग लगाकर पितृदेवतावों को समर्पण करें यथाः—

हिहि अक्तोजिभतं दद्यात् पितृणां च दिनौ कसाम्। तदेव जहुयाद्वहो अञ्जोयात्त् तदेव हि ७२। हरेरनर्षितं यत्तु देवानामर्षितं च यत्। मद्यमांस समं प्रोक्तं तद्गुञ्जीयात्कदाचन ७३।

नास्तिवेदात्परं शास्त्र' न हि कृष्णात्परः सुरः ७२। इति ब्रह्मवैवर्तपुराण गणपति खरण्ड ऋध्याय ४४। सत्यं विच्महितेविच्म सारंविच्म पुनः पुनः। ऋसारेसिंमस्तु संसारे सत्यं हिर समर्चनम् १०। इति बृहन्नारदीयपुराण पूर्वखरण्ड अध्याय ३४। हरेः पाद जलं प्राप्त्यं नित्यं नान्यहिबौकसाम् । सुराग्णामितरेषां तु फल पुष्प जलादिकम् ७४ ।

इति वृद्धहारीतस्पृति धर्मशास्त्र ऋध्याय = ।

नोट -मांस मद्य भन्नी इस बात पर ध्यान दें कि किसी कारण से दूषित अन्न को अति लघुता में मांस मद्य की पक्ति में नियोजित किया है. तो मद्य मांस जीच ही वस्तु है।

तथा—
हर्यार्षितं तु यचान्नं तीर्थं + वा पितृ कर्मणि।
द्यार्तिवतृ णां यद्गक्ष्यं गया श्राद्धायुतं लभेत् ३२०।
हरेनिवेदितं अत्तया यो द्याच्छाद्ध कर्मणि।
पितरस्तस्य यान्त्येव तद्विष्णोः परमं पदम् ३२१।
तीर्थं वा तुलसो पत्रं यो द्यात्पितृ देवतम्।
श्राकलप कोटि पितरः परितृप्ता न संश्यः ३२२।
यः श्राद्ध काले मूढ़ात्मा पितृ णां च दिवौकसाम्।
न द्दाति हरेर्भुक्तं तस्य वै नारकी गतिः ३२३।
इति वृद्ध हारीत स्मृति धर्मशास्त्र श्रध्याय ११।

<sup>+</sup> भगवत चरणामृत।

शाद में लेने योग्य फल यथा:-

आम्रमाम्रातकं विरुवं दाडिवं वीजपुरकम । प्राचीनामलकं क्षीरं नारिकेलं परूपकम ८९। बत्सकं च स खर्जुरं दाक्षानील कंपित्थकम । पाटोतं च त्रियातंच कर्कन्धृ वदराणि च ९०। वैकंकतश्च नारिंगं वीजपृत्रथापि वा। एतानि फला जातानि श्राखे देयानि यत्नतः ९१।

इति ब्रह्मपुराग् अध्याय ११२।

निष्फल दान यथाः— नक्षत्र सूचकस्यापि दत्तं भवति निष्फलम ५ । हिंस्यकस्य खलस्य च ७। वेद विक्रिबिणिश्रापि स्मृति विक्रियिणिस्तथा। धर्म विक्रियेणे विष दत्तं भवति निष्फलम ८।

ऽ नास्ति वेदात्परं शास्त्रं नास्ति मातुः परो गुरुः। नास्ति दानात्परं मित्रमिह लोके परत्र च।

इति अत्रिस्मृति ऋोक १४८।

श्वसी जीवी मसी जीवी देवलो ग्राम याजकः । धावको वा भवेत्रेषां दत्तं भवति निष्फलम् १०। मद्य मांसाशिनश्वापि स्त्री विट्स्याति लोभिनः । चौरस्य पिशुनस्यापि दत्तं भवति निष्फलम् १७। दंभेन चापि हिंसार्थं परस्याविधिनापि च २१। इति बृहन्नारदीयपुरास पूर्वस्वरुड श्रम्याय १२।

विधि से हीन तथा कुपात्र को दान देने से केवल उस दान का फल ही नहीं व्यर्थ होता है किंतु उस दाता के पहिलेके पुरयभी

नाश हो जाते हैं यथाः—

तिथि हीने यथा ऽ पात्रे यो ददाति प्रतिग्रहम् २७ । न केवलां हि तद्वचर्यं शेषमन्यत्र नश्यति २८ । इति दत्त्रस्मृति अध्याय ३ ।

"विद्या और तप से हीन ब्राह्मण दान न लेवे क्यों कि दान लेने से वह दाता के सहित नरक में जायना ऐसा याज्ञवल्क्यसमृति अध्याय १ रलोक २०२ में लिखा है। अत्रिस्मृति रलोक २३ और विशिष्ठस्मृति अध्याय ३ रलोक १३ में लिखा है कि जिस देश में विद्वानोंके भोगने योग्य वस्तुको मूख भोगते हैं उस देशमें अनावृष्टि होती है अथवा कोई बड़ा भय उपस्थित होता है। लघुरांखस्मृति श्लोक २३ में लिखा है कि जिन ब्राह्मणों के उदर में वेदोंके पवित्र मंत्र हैं वही ब्राह्मण पूजने योग्य हैं केवल ब्राह्मणका शरीर धारण करनेताले नहीं। पाराशरस्मृति अध्याय ८ श्लोक ३२ में लिखा है कि गायत्री से हीन ब्राह्मण शूद्र से भी अधिक अधुद्ध है, गायत्री और वेद के तत्व को जानने वाले ब्राह्मण को सबलोग पूजते हैं। बृहत्पाराशरीय धर्मशास्त्र अध्याय २-जपविधि-श्लोक १३ में लिखा है कि जो ब्राह्मण गायत्री नहीं जानता अथवा जान कर के भी उसकी उपासना नहीं करता वह शूद्र है। द्वस्मृति अध्याय २ श्लोक २१ और २२ में लिखा है कि जो ब्राह्मण विशेष करके मं-ध्योपासना नहीं करता वह जीवित अवस्था में ही शूद्र होजाता है और मरने पर कुत्ता होता है २१। सन्ध्या से हीन ब्राह्मण सदा अपवित्र रहता है और सब कर्मी के अयोग्य है उसके सब किये हुये कर्म निष्फल होते हैं २२। विशेष जानना हो तो मेरा बनाया "दानादरीं" प्रन्थ देखो।"

न अवेड्ण्व को छुए न उसका कचा पका अन्न खाय यथाः-

अविष्णवानामिष चसंसर्गे दूरतस्त्यजेत्। पक्काद्यं यथापकं वाग्यतो नियतेन्द्रियः १३६।

इति बृद्ध हारीत स्मृति धर्मशास्त्र अध्याय ११।

नोट-मांस खानेवाले का अन्न न खाय-देखो मनुस्मृति अध्याय ५ श्लोक २१३ और याज्ञवल्क्यस्मृति अध्याय १ श्लोक १६०। जो पशु को लाठी मारै उसका भी अन्न न खाय-देखो विशिष्ठस्मृति अध्याय १४ के शुरू में।

## अवैष्णवानां संलाप वंदनादान्विवर्जयेत् ८३। ×

इति नारदपञ्चरात्रान्तर्गत वृहद्त्रद्धसंहिता पाद २ अध्याय ५।

हम यहां पर किंचित यह दिखाते हैं कि गोमेध, अरवमे-धादि शब्दों के क्या अर्थ होते है यथा:-

शतपथत्राह्मण वेद के कांड १२ श्रभ्याय १ त्राह्मण ६ वाक् ३ में तिखा है कि--

## राष्ट्रं वा अश्वमेघः।

× हीन वर्णे च यः कुर्यादज्ञानाभिवादनम् ३११ । तत्र स्नानं प्रकुर्वीत घृतं प्रश्य विद्युद्धयति । समुतपन्ने यदास्नाने भुंजे वापि पिवेद्यदि ३१२ इति अत्रिस्मृति । अर्थ-जो मनुष्य अज्ञानवश होकर अपने से हीन वर्णे को नमस्कार करता है वह स्नान करके भी चाटने पर शुद्ध होता है ३११ । ३१२ ।

श्रीर शतपथत्राह्मण वेद के कांड ४ श्रध्याय ३ जाहाया ४ बाक् २५ में लिखा है कि--

अब १३ हि गौ: ।

नोट -- ब्राह्मण १ वाक् २५ भी देखो । इसी शतपथ में लिखा है कि-

श्रिग्निर्वा श्रश्यः, श्राज्यं मेथः।

इन उक्त बचनों का अभिप्राय यह है कि न्यायपूर्वक राज्य करना अश्वमेथ है। यो तथा सुगंधित वस्तुओं का अग्नि में होम करना अश्वमेथ है। विद्या आदि का दान देना अश्वमेथ है। अस इन्द्रियां और पृथिवी आदि को पवित्र रखना, सूर्य की किरणों से उपयोग लेना गोमेध % है। जब यतुष्य मरजाय तब उसके शरीर को विधिपूर्णक दाह करना ही नरमें है।

गाय का नाम वेद में अध्न्यया है (पृष्ठ ४१ मंत्र १४) याने नहीं मारने योग्य, (महाभारत शांतिपर्व मोचधर्म अध्याय ८५ श्लोक ४० से ४९ तक भी देखो), इस वास्ते यहाँ पर गो शब्द का अर्थ अन्न इन्द्रियाँ आदि यही होगा और मेध (यज्ञ) शब्द का अर्थ पृष्ठ१०-११में देखो।

अतः बैदिक साहित्य से भी इसी प्रकार के अर्थ होते हैं, जैसे उगादि कोष पाद १ सूत्र १५१ की व्याख्या में लिखा है कि-

श्चरतुते व्यापनोतीत्यर्वः । तुरङ्गो विद्वर्षः । श्चर्थात् श्चरव का श्चर्यश्चिम्नि भी होता है। नोट -वाज माने श्चन्न, इति वेदांग नैघंदु २।७।

श्रीर वेदांग नैघंटु श्रध्याय ३ खंड १७ में मेघ का श्रर्थ यज्ञ लिखा है।

उणादिकोष पाद २ सूत्र ६७ की व्याख्या में लिखा है कि

गच्छित यो यत्र यया वास गौः। पशुरिन्द्रियं सुखं किर्गोविज्ञं चन्द्रमा भूमिर्वाणी जलं वा।

श्रर्थात् इन्द्रिय, सुख किरणादि गौ के श्रर्थ होते हैं।

वेदांग नैघंटु ऋध्याय १ खंड १४ में नर का ऋर्थ ऋरव होता है और ऋरव का ऋर्थ ऋग्नि होता है।

श्रव गोमेध अश्वमेय नरमेघादि शब्दों के यही अर्थ निकले कि श्रम जल इन्द्रियें पृथिवी श्रादि को पवित्र रखना और सूर्य की किरणों से उपयोग लेना गोमेध है। घी तथा सुगंधित वस्तुओं का अग्ति में हवन करना अश्वमेध और नरमेध है।

१ नोट—तर्पण करना पितृ यज्ञ है, हवन करना देव यज्ञ है, पढ़ना ब्रह्म यज्ञ है, इति मनुस्मृति अध्याय ३ श्लोक ०० श्रीर कात्यायनस्मृति खंड १३ श्लोक ३। गोमेध अर्थान यज्ञ में गौ मारने का खंडन देखिये महाभारत शांतिपर्व मोज्ञधर्म अध्याय ९२ श्लोक १ से ३ तक।

२ नोट—वेदों में मांस भन्नणादि अखाद्य कुवस्तुयों का जो नाम निकलता है, इसका कारण यह है कि वाममर्गी पान्य-डियों ने वेद मार्ग को प्रलीन कर दिया "वेदमार्ग प्रलीनंच पाखरडाड्ये ततोजने ३९ इति ब्रह्मपुराण अध्याय १२२ " पृष्ठ ९२ रलोक १७ और पृष्ठ ९३ रलोक १८ और नोट देखो । विशेष जानना हो तो "हिंसातकीवली " प्रश्न २६ का नोट देखो।

> वेद धर्म मुक्ति नहीं दे सकता यथाः— संदेहो वर्तते राजन्ननिवर्तति मे कचित्। भवता कथितं यत्तच्छणवतो मे नराधिप ४८। ऽ

S स्वर्ग की प्राप्ति अनित्य है, इसे लघु और अग्यानी लोग चाहते हैं।

वेद घर्षेषु हिसास्यादधर्म बहुताहिसा।
कथं मुक्ति पदो धर्मो वेदोक्तोवत् भूपते ४९।
पत्यक्षेण त्वनाचारः सोमपानं नराधिप।
पश्चनां हिंसनं तद्वद्वक्षणं चामिषस्य च ५०।
सोवामणौ तथा प्रोक्तः प्रत्यक्षेण सुरा ग्रहः।
च्यक्रीड़ा तथा प्रोक्ता व्रतानि विविधानि च ५१।

इति देवीभागवत स्कंघ १ अध्याय १८ । सकाम कर्म यज्ञ अग्निहोत्रादि करनेवाले नरकको जातेहैं यथा :-

श्रमुर्था नाम ते लोका ऽ अन्धेन तमसा द्वता ÷।

ताँस्तेप्पेत्यापि गच्छन्ति येके चा त्वामहतो जना (-३।

श्रम्यन्तम ऽ प्विशन्ति ये विद्यामुपासते।

ततो भूय ऽ इवते समोप ऽ उव्विह्यायाः ार्ग्रता (१३।

इति यजुर्वेद श्रध्याय ४०।

नोट यही १२ वीं श्रुति वृहदारएयकोपनिषद् अध्याय ४ ब्राह्मण४ मंत्र १० में है। जोसकाम कर्म के करने वाले हैं वे मूर्ख स्वर्ग भोग कर फिर सनुष्य लोक को पाकर पशु योनि नरकादि! हीन लोक को प्राप्त होते हैं यथा:—

इष्टापूर्वं मन्यमानावन् ष्टंनान्यच्छ्ये यो वेदयन्ते प्रमृदाः । नाकस्य पृष्ठे ते सुक्रतेतु भूत्वेमं लोकं द्वीनतरश्चा विशन्ति १०। इति मुख्डकोपिषद् मुंडक १ खंड २।

*f* 

स्नानदान यजनादिकाः क्रियामोचनाविध दृथैवितष्ठते ७४। सिलाले सैन्यवं यद्वत्साम्यं भवति योगतः । तथात्म मनसोरैक्यं समाधिरिति कथ्यते ७५ । इति वाराहोपनिषद् अध्याय २।

अज्ञानान्ध तमोरूपं कर्म धर्मादि लक्षणम् १२। इति बाराहोपनिषद् अध्याय २।

सकाम कर्म करने वाले जो संसार को चाहते हैं सो यह संसार असार है जीव इसमें सुखकी आशा न करें एक हरि का ही स्मरण सार है यथा:—

## असार भूते संसारे सारमेकं विनिर्दिशेत्। असारा शेष लोकस्य सारमाराधनं हरे १।×

इति गरुड़पुराण पूर्वखंड अध्याय २३३।

नोट-कलियुग में हरि के नाम सिवाय जीवों के तरने का अन्य उपाय नहीं है-दंखो पृष्ठ २९ श्लोक ८६ की टिप्पणी।

प्रवल इन्द्रियों के तंत्र होकर जीव जानते हुए भी पुनः श्रात्म ज्ञान होते हुए कर्मका कर्ता स्वयं वन जाता है, वह श्रात्मा जानते हुए भी विमूढ़ हो जाती है यथाः—

अन्यान देवों के उपासक होने पर तथा उन का मंत्र (दीचा)
 लेने पर हिर मंत्र ले सकते हैं यथा:—

श्रवैष्णवोपदिष्टंचेत् पूर्व मन्त्रं परित्यजेत् । पुनश्च विधिनासम्यगवैष्णवाद्याद्यन्मनुम् । •

इति राममन्त्रपरमवैदिकान्तरगत पद्मपुराण उत्तरखंड अध्याय २२६ का वचन । दुर्लभा वैष्णवी दीचा ४० इति नारदीय पुराख उत्तरभाग अध्याय ३३। प्रकृते: क्रियमाणानि गुर्णैः कर्माणि सर्वशः । श्रदङ्कार विमृदात्मा कर्ताद्वमिति मन्यते २७ । इति गीता श्रध्याय ३ ।

नोट -महाभारत के भीष्मपर्व में २३ अध्याय से ४१ तक की गीता कहते हैं।

जिस कर्म का फल थोड़ा है उसे दूर से त्याग दे यथा:-

इहामुत्र फलं लच्ध्या सुखं भुत्तया पुनः पतेत्। तस्मादनित्यमस्त्रिलं दूरतः परिवर्णयेत् २२।

इति ऋादिपुराण श्रध्याय ८।

नोट-जो कर्म विधिपूर्वक नहीं किया जाता तो उससे स्वर्ग नष्ट होता है-देखो मुंडकोपनिषद् मुंडक १ खंड २ श्रुंति ३।

गृहस्थ गुरु नहीं तारसक्ता क्योंकि वह आप ही विडवना में पड़ा है तब दूसरे को क्या छुड़ायगा यथाः —

रोग ग्रस्तो यथा वैद्यः पर रोग चिकित्सकः।
तथा गुरुर्मु भ्रुभोर्मे गृहस्थो ऽयं विद्ववना ४४।
इति देवीभागवत स्कन्ध १ अध्याय १४।

कलियुग में धर्म के जानने वाले भी अधर्म करते हैं यथाः—

महाँतो ऽपि च धर्मज्ञा अधर्म छुर्वते नृप ५३।× इति देवीभागवत स्कंब ६ अध्याय ११।

श्रौर कलियुग में पंडित पासरडी होते हैं यथाः—

पंडिताः सोदरार्थं वै पाखंडानि पृथक् पृथक् । भवर्तयंति किता मेरिता मंद चेतसः ४३ । इति देवीभागवत स्कन्ध १ श्रध्याय ८ ।

अर्थ कामी प्रशस्ती हो सर्वेषां संमती प्रियो । वर्मावर्षेति वान्वादो दंभो s यं महतामपि १०। इति देवीभागवत स्कन्व ६ अप्याय ७।

नोट-श्रविचा के मध्य विषे वर्तते हुये मूंड्जन अपने को धीर पण्डित मानने वाले अनेक कुटिल भेष को धारण करते हुए

मास्ती काक उल्लेक वक दादुर से अये लोग।
भले ते शुक पिक मोर से कोड न प्रेम पथ योग १।
हृदय कपट वर बेष घर बचन कहें गढ़ छोल।
श्रव के लोग मयूर ज्यों क्यों मिलिये मन खोल २।
भले बुरे से लगत हैं बुरे भले से लोग।
"नागर" नहिं चीन्हे परें मेरे मन यह सोग ३।

समते रहते हैं-जैसे अन्या पुरुष अन्या करके ही लेगसा हुना भूमता है तैसे, देखो कठवल्लीउपनिषद् अध्याय १ बत्की २ शृति ५। जो बुध होगा वह भोगोंमें कभी नहीं रमेगा (गीता पार्र-२३) शैवमत तामसी मार्ग है यथाः—

रुद्र उवाच-

क्ता मत्कृत मार्गेण बहुक्षेण तामसै: २५ ।
इति बाराह पुराण व्यञ्चाय ७० ।
और शिव व्याप ही प्रेत कप रमशान में रहते हैं यथाः—
समज्ञान वासिनो नित्यं प्रेत कपाय वै नम: ७९ ।

इति ब्रह्मारङपुराख पूर्वभाग ऋतुवंगपाद श्रध्याय २०।

शंकरजी तपोधन दाता वेदों के पारण होते हुए भी स्लेट्झ सरीखे रहते हैं अस्थि (हड्डी) अस्म की धारण किये हैं इसी से इनको स्लेच्छ (भूतादि) अच्छे लगते हैं यथाः—

त्रपोधनं वित दान्तं म्लेच्छ वद्वेद पारगस्। तस्मात् म्लेच्छ पियो सृयात् शंकर रचास्थि भस्पपृत्।

इति शब्दकल्पद्रुम शङ्कर शब्दोन्तरगत कालिकापुगाण अध्याय ८३ का वचन । विध्य कहा से कहते हैं कि तुनसे राजसी हम में सात्यकी और शिव में तामसी शक्ति है-अभिशय यह है कि शिव तामसी हैं यथा:—

जगत् स्वनने शक्तिस्वियि तिष्ठति राजसी।
सात्वकी मिय रुद्रे च तामसी परिकीर्तिताः ४७।
इति देवीभागवत रुक्षेष १ अध्याव ४।

राजसो ब्रह्मा सारिवको विष्णुक्तावसो छह इति येते वयोगुण युक्ता, इति योगच्डावर्ययुपनिषत् श्रुति७२।

नोट-पद्मोत्तरखंड अध्याय १३२ फ्लोक ८० भी देखो।

विष्णु को छोड़ अन्य देवता के पूजने वाले पाखरडी दोते हैं यथा:—

वे अर्चयन्ति सुरांनन्यां स्त्वां विना पुरुषोत्तय । तेपासंडत्वमापनाः सर्वतोक्तमहिताः ५८ । इति पद्मोत्तरसम्बद्ध अन्याय २५५ ।

शैव शाक नाजवडी होते हैं यथा:—
पास्त्रपट शैव शाकादि तंत्राचीकोकनादिकम् ।
स्वतो त्रक शिवादिनां प्रद्धानामचेनादिकम् ९३ ।
इति नारदपंचरात्र सरद्धाजसंहिता अध्याय १।

शिव के बनाये अन्थ तामसी हैं इन्हें कभी न माने पथा:-

तथा रहेण कथितं मोहनं श्रुद्रकागदम्। तन्त्रं बहु विसद्ध्य तामसं परिवर्णयेत् २३ ।

इति नाग्द्पंचरात्र भग्द्वाजसंहिता क्राप्याय ४ ।

शिव काली गरोश कूमांड भैरव भूतादि तामसी होते हैं यथा:-

रुद्र: काली गखेशहच कृष्याग्रहा+ भैरवादयः। । भग्न मांसाशिनश्चान्ये तामसाः परिकीर्तिताः २६८ ।

इति वृद्ध हारीत स्मृति अध्याय ११।

मोट-जब शिव तामसी हैं तो दुर्गा उनकी शक्ति (बल) है वह तामसी होनाही चाहिये। देवीभागवत रूकं द श्रव्याय २ श्रांक २० में लिखा है कि महालदमी सात्विकी सरस्वती राजसी और काली तामसी है। अध्याय ८ श्लोक ३५-३६ में लिखा है कि विष्युकी शक्ति सात्वकी, ब्रह्मा की शक्ति राजसी और शिव की शक्ति सात्वकी, ब्रह्मा की शक्ति राजसी और शिव की शक्ति तामसी है।

<sup>†</sup> शिव गण विशेष । ‡ शिव गण विशेष।

अझराज्ञस बेताल भूत भैरवादि गर्गों की पूजा का निषेध है MAI!:-

वसराक्षस वेताल यज्ञ भूतार्चन वृष्णम्। क्रुरुगोपाकमहाबोरं नरकं प्राप्ति साधनम् ९६। कोटिनम्म छतं पुरुषं यज्ञदान क्रियादिकम्। सद्यः सर्वत्वयं यांति यज्ञ धृतादि पृजनात् ९७। खियो वा पुरुषो वाणि यह भुतादिकार्चनात्। करनकोटि महस्राणि करप कोटि शतानिच ९८। किविर्मत्वाथ विष्ठायां पितृ भिः सह पञ्जति ९९। यज्ञराक्षस भूताश्च कुष्मांड गण भैरवाः। नार्चनीयाः सदा देवि स्वर्गत्नोकमभीष्सुभिः ११७। इति पद्योत्तरस्यस्य अध्याय २५३।

नोट- शैंधधर्म निवेध विशेष रूप में जानना हो दो हिंसा-तर्कावलीयत्थ देखो । प्रेतान्भूतगंणांखान्येयजनतेतामसाजनाः। इति गीता र्७। ४।

सिय निर्मालय निवेध यथाः—

महादेव का भोग लगा (नैबेख) खातेबाजा नवत है। नाता है यथा:-

श्रग्राह्मं शिव नैवेद्यं पत्रं पुष्पं फलेमलम् १९ ।

इति शिवपुराण विद्येश्वरसंहिता अध्याय २२।

सकृदेव हि योश्नाति ब्राह्मणो ज्ञान दुर्वतः । निर्मान्यं शंकरादिनां स चांडातो भवेद्ग्युवस् ९९ । कल्प कोटि सहस्राणि पच्यते नरकाण्निना । निर्माल्यं भो द्वित श्रेष्ठ रुद्रादीनां दिवीकसास १०० । इति पद्योत्तरखण्ड अध्याय २५५ ।

द्रव्यमनं फलंतोयं शिवस्थं न स्पृत्रेत्किष्वत् । निर्माल्यं नैव लाङ्कोत कृपं सर्वे विनिःक्षिपेत् । इति स्वधर्मामृतसिंधु तरंग १० पृष्ठ २४१।

नोट—शिव निर्माल्य के विषय में ब्रह्मवैवर्त्तपुराण प्रकृति खण्ड अध्वाय ३० श्लोक १६८ और शिवसंहिता भव्यो त्तरखण्ड उमा महेश्वर संबाद श्रीरामार्चामाहात्स्य विम-दोपाल्यान अध्याय ६ देखों ।

देवी को भोग लगाके खाने का निषेध है यथाः— नोच्छिष्टं चिएडकान्नं च सामिषं त्रपत्ता हतस् ४९।

इति भागवत स्कंध ६ अध्याय १८।

श्रर्थ—चंडिका (देवी) का जूठा श्रम्न न खाय, मांस खाने वाले शूद्र का लाया न खाय ४९। ×

चकाङ्कित अगवद्भक्त अन्य देवता देवी को नमस्कार न करें यथाः—

× पाराशरस्यृति खध्याय ११ ऋोक १६, पद्मपुराण बह्मखरह ख्रध्याय १९ छोक ११ से १३ तक और पद्मपुराण उत्तरखरह खध्याय १९ छोक ६० देखो। भगवत के डिन्ड्रष्ट के सिवाय अन्य जीवों का उिन्ड्रष्ट पाना तामसी है (डिन्ड्रिष्टमिपनामें भोजनं तामसं त्रियम् गीता१०। १०) मनुस्मृति खध्याय २ १ लोक ५६ भी देखो। विष्णु को छोड़ ब्रह्मा शिवादि देवता जीव हैं, देवी माया है। महर्षि कपिलदेव प्रणीत "कापिलस्त्र" में लिखा है कि "पुरुषः ४" अर्थात पुरुष (ब्रह्म) एक है। या देवी सर्व मृतेषु विष्णु मायेति शब्दिता। नमस्तस्यैनमस्तस्यैनमस्तस्यैनमस्तस्यै नमन्तस्यै नमा नमः १२ इति प्राक्तिखेय पुराण खध्याय ८२। शक्ति चिह्नान्महामाया तस्यांशाच्छारहाद्यः। तस्याएव समुद्भूतो विश्वो माया प्रतिष्ठितः २१। इति शंचसर्गीय महासम्यण्या सर्ग १।

नान्यं देवं नमस्क्वरीन्नान्यं देवं निरीक्षयेत्। चक्राङ्कितः सदा तिष्ठेन्मद्रक्तः पांडु नन्दन।

श्र इति स्वधमीमृतसिधु तरंग १७१ तामसी नरक को जाते हैं श्रीर जब संसार में पैदा होते हैं तो त्रियक् योनियों में जाते हैं यथाः—

तथा पत्नीनस्तमिस मृद् योनिषु जायते १५।
कथ्वं गच्छन्ति सत्वस्था मध्ये तिष्ठति राजसा।
जयम्य गुण द्वितस्था अयो गच्छन्ति तामसाः १८।
इति नीता अध्याम १४।

तामसा निरय यांति । इति ब्रह्मपुराण अध्याय १३३ श्लोक ४६ । तिर्यक्तवंतामसा निरयं ४०।

इति मनुस्मृति अध्याय १२ । नोट-कूर्मपुराख पूर्वाई अध्याय २ श्लोक ४ ६ - ५७ सहा-सारत आश्वमेधिक पर्व आध्याय ३९ श्लोक १० में भी ऐसा ही है

क्ष स्वधर्मामृत सिंधु के मिलने का पता — विद्वद्दर श्रीमाम् मधान्त, पं० श्री अजम्बण शरण देवज्, सु० पो० ऊखड़ा, जिला वर्षना (वक्षात्व)। १८। विस्तारपूर्वक तामसगुण, राजसगुण, सात्विकगुण के स्वरूप को जानना हो तो मनुस्मृति अध्याय १२ रलोक ३९ से श्लोक ५१ तक देखो । वाजनलक्यस्मृति अध्याय ३ श्लोक १३९ में लिखाहै कि तमोगुणी वृत्ति वाले मनुष्य पशु-पन्नी आदि तिर्यक् योनियों में उतपन्न होते हैं ।

जब शिव तामसी हैं तो उनके मक भी तामसी होना चाहिए भौर शिव को भी तामसी फल देना चाहिये (गीता १४। १६-१७) भौर शिव भक्तों का भोजन भी परलोक में तामसी होना चाहिये। शिव के भक्त मरने के बाद राचस बेताल मृतादि बन कर शिव के गण होते हैं, गण और प्रमथ संझा भूत आदिकों की है भौर इन्हीं के शिव स्वामी हैं और इन्हीं को तामसी फल देते हैं यथा-

> यः शर्व रक्षमां नायस्ताममानां फल बदा २५। वैदाल गण भूतानां स्वामी भोग फल बदः २६। इति कूर्मपुराण उत्तराई भ्रम्याय ६।

नोट-शिव का मोग लगाया अन्न मिठाई मेवा फल कुल ज-लादि प्रहण न करें क्योंकि इसका शाखों में निषेय है, देखों मेख बनाया "निर्माल्यनोध " और सब प्रकार से शैव धर्म निषेध सानमा हो सो मेरा बनाया हिंसातकीयली मन्थ देखों। ब्राह्मण से ! चांडाल भो विष्णुमक श्रेष्ठ है ययाः — चांडालोपि सुनि श्रेष्ठ विष्णु भक्तो हिजाधिकः । विष्णु भक्ति विहीनश्च हिजोपि स्वपचायमः ४१ । इति नारदीयपुराण पूर्वेखरुड ख्रव्याय ३४।

ब्राह्मणाः क्षत्रिया वैश्याः श्रुद्धाश्चान्येन्त्यजास्तथा । हिरिमिक्तिप्रकाये ते कृतार्था न संशयः २ । हिरेरमको विप्रो ऽ पि विज्ञेयः श्रवाधिकः । हिरि भक्तः श्वपाको ऽ पि विज्ञो यो ब्राह्मणाधिकः ३। स कथं ब्राह्मणो यस्तु हरि भक्ति विवर्जितः । स कथं श्वपचो यस्तु भगवद्धक्ति मानसः ४ । श्रव्याजेन यदा विष्णुः श्वपाके नापि पूज्यते । तदा पश्येचमध्येवं चतुर्वेद दिजाधिकम् ५ ।

इति पद्मपुराण क्रियायोगसारखंड थ्रन्याय १६। त्यक्त्वा वैकुंडनाथं त्यन्यमार्गे कथं रमेत्। भक्ति हीनेश्च चतुर्वेदः पहितैः किं प्रयोजनम् ९८। स्वपचो भक्ति युक्तस्थु त्रिदशैरिष पूज्यते। स्वकरे कंक्णं वद्धा द्र्षसैः किं प्रयोजनम् ९९। इति पद्मोत्तरखंड श्रन्याय १३२। इनपाको ऽ पि महक्तः सम्यक् श्रद्धा सम्मिनतः । माम्रोतिभिनतां सिद्धिमन्येषामत्र का कथा १८८ । इति ज्ञह्यपुराण अध्याय ६९ ।

नोट-गीता ९। ३२ देखो ।

विपाइद्विषणगुणयुतादरिवन्दनाभपादारिवन्द विम्रुखा-च्छ्र्यचं वरिष्ठम् । मन्ये तदर्पित मनो वचने हितार्थ प्राणं पुनाति स इतं न तु भूरिमानः १०।

इति भागवत स्कंव ७ अध्याय ९।

नोट-और गीता ९। ३२भी देखो। इद्धहारीत स्ट्रित अध्यायर स्ट्रोक ३१ में किखा है कि अवैष्णव त्राहाण को रवपाक और अधर्मी जानो वह मरने के बाद रौरव नरक को जाता है। राज्य कल्पद्रुम ब्राह्मण शब्द के अन्तर गत लिखा है कि जो द्विज विष्णु मंत्र और एकादशी वित से रहित है वह जैसे विना विष का सर्प ऐसे जानो।

विष्णु भक्ति से किरात हण श्रोप पुलिंद पुलकस श्रामीर कंक यवन खसादि श्रौर भी पापी शुद्ध हो जाते हैं इति भागवत इकंध २ श्रध्याय ४ श्लोक १८। विरक्त (बैरागी ) धर्म यथाः—

न तस्य जन्म कर्माभ्यां न वर्णाश्रम जातिभिः। सज्जते ऽ स्मिन्नहंशावो देहेवै स इरेः नियः ५१। इति सागधन स्कंध ११ कव्याय र।

द्वान निष्ठो विरको वा पद्धको वा ८ न वेशकः।
स तिङ्गानाश्रमांस्त्यक्त्वा चरेद्विध गोचरः २८।
वदेदुन्मत्त वद्विद्वानगोचर्या नैगमश्चरेत्।
बुधो बात्तकवत क्रीडेत क्रशलो जडनच्चरेत् २९।
वेदवाद रतो न स्यास पाखण्डो न हेतुकः।
शुष्क बाद विवादेन किंचित्पक्षं समाश्रयत् ३०।
इति शागवत स्कंध ११ अध्यास १८।

वर्जितास्ते ऽ पि सद्धमें राघ रंगेने रंगिताः ८२ । इति पद्मसर्गीय महारामायण सर्ग १।

नोट—मह्यभारत आश्वमेधिकपर्व अध्याय १९ श्लोक ८ से १३ तक भी देखो। विरक्तों को यह अध्याय संपूर्ण देखना चाहिये। सान्तस्समान मनसा च सुशीलयुक्तः वोष इमा गुण दया ऋतु बुद्धि युक्तः। विज्ञान ज्ञान निरतः परमार्थ बेन्तानिर्धामको ऽभव मनाः स च राम भक्तः ९। इति पञ्चसर्गीय महारामायम सर्ग र "बिल्जोर्नीम सहस्राणां पठनाञ्चभते फलप्। तत्कलं लभते मर्लो रामनासस्मरञ्जपि ९०। इति पद्मपुराण सप्तः कियायोगसार खण्ड अध्याय १५॥।

विरक्तस्या ऽऽ त्मर्कस्य सुखमेकान्त सेवनम् । श्रात्मानुचितनं चैव वेदान्तस्य च चितनम् ४५ । इति देवीभागवत त्कंघ १० । मन्यों यदा तिकत समस्त कर्मा निवेदितात्मा विचिषितोये । तदामृतत्वं प्रतिपद्यसानोस्यात्म भूयाय च करूपते वै ३४। इति भागवतस्कंघ ११ श्राप्याय २९ ।

सर्वत्राह्खिता देशः सप्त दीपैक दंड घृत् । भ्रान्यत्र ब्राह्मसा कुलादन्यात्राच्युत गोत्रतः १२ । इति भागवतस्यंघ ४ अध्याय २१ ।

किं वा भागवत।धर्मं न प्रायेखनिक्षिताः । प्रियाः परमहंसानां तस्वश्चन्युतिषयाः ३२ । इति माजवत वर्षाव १ अध्याय । । त्रैगुएय विषया वेदा निस्त्रैगुएयो भवार्जुन ४५। ऋध्याय २। सर्व धर्मान्परित्यज्य मामेकं शर्खां त्रज ६६। ऋध्याय १८।

नोट-प्रश्चित्तत्त्वणोधर्मः ५१। इति महासारतञ्जुशासन पर्वे अध्याय ११५।

सर्व कर्म परित्यामी नित्य सप्तो निराश्रयः।

पुरायेन न पापेन नेतरेशा च लिप्यते ९७।

इति अन्नपूर्योपनिषद् अध्याय ५।

अज्ञानान्य तयोष्ठपं कर्म धर्मादि तासणम् १२ । स्वयं प्रकाशसात्मानं नैव मां स्मष्टु पहीते । सर्ष साक्षिणमात्मानं वर्णाश्रम विवर्जितस् १३ । इति वासहोपनिषद् अध्याय १।

मृत्या मोहनयी माता जातो वीत्र मयः सुतः।
मृतकं इय संग्रासी कथं संघ्यास्यास्महे १३।
ह्याकाचे चिदादित्यः सदा भासति भासति।
नास्तमेति न चोदेति कथं संघ्यास्यास्महे १४।
इति गैकेन्युपनिषद् अध्याय २।

निरोधम्तु खोक देद व्यापार न्यासः ८। तस्यात् सेव प्राज्ञा सुम्रुश्वाः ३३। नास्ति तेषु जाति विद्या खप कुल धर्म क्रियादिभेदः ७२। इति नार्वभक्तिसूत्र।

जिबि हरिभगति पाइ नर तजहिं आश्रमी चारि १७। कलिहिं पाइ जिबि धर्म पराहीं १६।

इति मानसरामायण किव्किथाकांड । अ

स्यागित कर्ष सुभासुभदायक, यनि वोश्विसुर सुनि नायक ४१ कर्म कि होहि सुरूपि चीन्हे

अय कि रहड़ हरि चरित बखाने ११२।

इति मानसरामायण उत्तरकांड।

नाना जनस करम पुनि नाना, किये जोग जप मखतपदाना १६ इति मानसरामाच्या उत्तरकांड।

नर विविध कर्म अपर्व वहु मत सोक मद सव त्यागहू। विस्त्रास करि कह दास तुलसी राम पदअनुरागहू ३९ इति मानस रामायण आरख्यकांड।

अ तुलसीकृत राम।यण को ही रामचित्तमानस या मानसरामायण कहते हैं।

तज्यो पिता पहाद विभीषण दन्धु भरत महतारी, बिला गुरु तज्यो कंत इजवनति भये सुद मङ्गलकारी १७४। इति विनयपत्रिका।

करन नोनि जनमेड जह नाहीं, यें खगेस खम खम जगमाहीं। देखेऊ सब कर करम गुझाई, सुखी न भवेड अवहिं की नाई ९६। इति मानसरामायण उत्तरकांट।

श्चरवत्थ सदशं नित्यं जन्म मृत्यु जरायुतम् ।
वैराग्य बुद्धिः सततमात्म दोष विषेक्षकः ८ ।
इति महाभारत श्चाश्वमेधिकपर्व श्रध्याय १९।
नोट-वैराग्य का स्वरूप देखो गीता १८ । ५२।
ऐषागितिर्विकता नामेषधर्मः सनातनः ३८ ।
इति महाभारत श्चाश्वमेधिकपर्व श्रध्याय ५१।

नीट-

दोहा- ब्राह्मद श्रम जग दिशि विदिशि, ब्राम धाम बन भौन । प्रेम तो खोजत फिरत है बिन शिर को धड़ कौन १ । श्राहमद श्रातिशय कठिन है, प्रेम करन जगदीश। जो कीजै तो दीजिये तन मन लज्जा शीश २ । कहा करव वैकुरठ लै कल्प खुक की खाँह।

ष्यहमद ढाक सहावनो जो प्रीतम गल बाँह ३। नारायण अतिशय कठिन शीतम पुर को बाट। या मारग सो पग घरै प्रथम शीस दे काट ४। चढ़के मोम तुरङ्ग पर चलियो पावक साहि। प्रेम पन्थ ऐसो कठिन सब सों निबहत नाहिं ५। तन सुख चाहें शीस घड़ मन निज करमें लोग। "नागर" वे संसार में नहीं प्रेम के जोग ६। टके सेर नहिं बिकत है प्रेम बजार बजार। "नागर" रतन अमोल यह लेत शीस को भार ७। मूल्य तन रहीम है कर्म वश मन राखो वहि छोर। जल में उलटी नाव ज्यों खैंचत गुनके जोर ८। पापों से घिरणा करें नहिं पापी से सोय। "नागर" तौ फिर अस वनै कबहुं बनी न होय ९। रोगों से घिरणा करें नहिं रोंगी से सोय। "नागर" तुव कल्याण जग जीव दया से होय १०। रावस धर्म यथाः -

पर दारावमर्शित्वं पारक्यार्थे लोलपाः । स्वाध्यायस्त्रयंवके + भक्तिर्धर्मीयं राक्षसःस्मृतः २६ । इति वामनपुराण अध्याय ११।

<sup>+</sup> हरः स्मर हरो भर्गस्थ्यम्बकश्चिपुरान्तकः ३५ । इत्यम्बः ।

यक्ष रक्षः पिशाचानं मद्यं मांसं सुरासवम् । तद्वाह्मणेन नातव्यं देवानामश्नता इवि ९६ । इति मनुस्मृति अध्याय ११ ।

स्वहा स्वधा ऽ ग्रुत भुजो देवा: सत्यार्जव विया: ।

क्रव्यादान राक्षान्विद्धि जिह्वानृत परायगान् २७ ।

इति महाभारत अनुशासनपर्व अध्याय ११४ । ×

आसुर पात्र (वर्तन) जो कि श्राद्ध में निषेध हैं यथाः—

आसुरेगा तु पात्रेण यस्तु द्यात्तिकोदकम् ।

पितरस्तस्य नाश्नन्ति दश्वर्षाणि पश्च च ९ ।

अस्तः पंचमोवेदः सुपुत्रः सप्तमोरसः १० ।

इति समयोचित पद्यमालिका जकार ।

सपादलचं च तथा भारतं मुनिना कृतम् ।

इतिहास इति प्रोक्तं पंचमं वेद संमतम् २६ ।

इति देवीभागवत स्कंध १ श्राच्याय २ श्लोक २० भी देखो ।

इतिहास पुरागादि परमात्मा की स्वास से निकले देखो २४
कृष्ठ को टिप्पणी ।

कुलाल चक्र निष्पन्नमासुरं मृत्मयं स्मृतम् । तदेवहस्त घटितं स्थाल्यादि दैविकं भवेत् १० । इति कात्यायनस्मृति खण्ड १७ ।

श्चर्य-जो मनुष्य श्वासुरपात्र से तिलोदक देता है उसके घर १५ वर्ष तक पितर लोग नहीं खाते ९। कुम्हार के चाक से बने हुए मिट्टी के पात्र को श्वासुरपात्र श्चीर हाथ से बने हुये थाली श्वादि मिट्टी के पात्र को देवतायों के पात्र कहते हैं १०।

नोट-बौधायनस्मृति प्रश्न २ अध्याय ८ श्लोक २४ में लिखा है कि गेरुआ वस्त्र धारण करके जप होम तथा प्रतिमह करने से और हब्य तथा कब्य की हिव देने से वे देवताओं को प्राप्त नहीं होतीं हैं। वृहद्विष्णुस्मृति अध्याय ७९ श्लोक १ में लिखा है कि रात के लाये हुए जल से श्राद्ध नहीं करें।

श्राद्ध यज्ञ नाश यथाः—

वस्नाभावे क्रियानास्ति यज्ञावेदास्तपांसि च । तरमाद्वासांसि देयानि श्राद्धकाले विशेषतः ७२ । ६ति ब्रह्मपुराण अध्याय १९२ ।

पिशाचधर्म यथाः—

अविवेकस्तथा ऽ ज्ञानं शौच द्वानिरसत्यता ।

×िशाचानामयं धर्मः सदा चामिष गृत्रुता २७। इति वामनपुराण अध्याय ११।

नोट-ऊपर ९६ श्लोक देखो। निश्चर धर्म यथाः—

जेहिविथि होइ घरम निर्मूजा सो सब करहिँ बेद पतिक्र्ला। चरनि न जाइ अनीति घोर निसाचर‡ जो करिं। हिंसा पर अति पीति तिन्हके पापिहें कवनि मित्रि १८३। मानहिँ मातु पिता निहँ देवा साधुन्द्र सन करवाविहँ सेवा। जिन्हके यह आचरन भवानी ते जानहु निसिचर सव मानी१८४।

कहुँ महिष मानुष धेनु त्वर अज त्वल निसाचर भच्छहीँ ३ । इति मानस रामायण सुन्दरकाण्ड ।

<sup>×</sup> पिशाचः-, पुं, (पिशितंमांसमश्रातीति। पिशित + स्वश + "कर्म्मर्थयण्।" ३।२।१। इति अग्। ततः "प्रवोदरादीनि यथो-पिद्छम्।" ६।३।१०९। इति शितभागस्य लोपः स्वशमागस्य शाचादेशः।)

<sup>1-</sup>राज्ञस पिशाच निश्चिर निशाचर सबकी एकही संज्ञा है।

नहानिश्चर धर्म यथाः-

करै निशाचर कर्म जो भजपरतीमद्यास ।
निश्चिर कुल भूषण सोइ न दूपणपरिहास २२१ ।
इति मानसमयक लंकाकांछ ।
म्लेजधर्म यथाः—

नजात्या ब्राह्मणश्चात्र क्षत्रियो वैश्य एवच ।
न श्रुद्रो न च वै म्बेच्छो भेदिता गुण कर्मभिः ३८।
त्यक्त स्वधर्मा चरणा वृष्टुणाः ५र पीडकाः ।
चंडाश्च हिंसका नित्यं म्बेच्छास्तेद्वविवेकिनः ४४।
इति शुक्रनीति श्रध्याय १।

श्रर्थ-इस जगत में जन्म से ब्राह्मण चत्री बैश्य शूद्र म्लेच्छ नहीं होते हैं, किंतु गुण और कर्म के भेद से होते हैं ३८। त्याग दिया है श्रपने धर्मका श्राचरण जिन्होंने ऐसे निर्द्यी पर को पीड़ा देने हारे श्रत्यंत कोधी और नित्य हिंसक श्रर्थात् मांस खानेवाले जो श्रज्ञानी मनुष्य हैं वे म्लेच्छ हैं ४४। हैत्य धर्म यथा:—

मत्स्य मांसापि सु भीता मृषा वचन भाषिणः २०। नर जातिषु दैत्यानां चिन्हान्येतानि भृतते २३। इति पद्मपुराण सृष्टिखंड अध्याय ७६।

## दैत्या हिंसानुरक्ताश्च ३६।

इति ब्रह्मपुराण श्रध्याय ५३

"गायवधे ते तुरका कहिये उनते वैका छोटा। कहिं कबीर सुनो हो संतो किल का ब्राह्मण खोटा ५, शब्द ११। कहकबीर वे दीनों भूले रामहिं किनहुं न पाया। वे खिसया के गाय कटावें बादै जन्म गवांया५, शब्द ३०। इति वीजक कबीरदास शब्द प्रकरण"

नाश्तिक धर्म यथाः-

हिंसा पराश्चये के चिद्ये च नास्तिक वृत्तयः । लोम मोह समा युक्तास्तेवे निरय गामिनः ४। इति महाभारत आख्वमेधिक पर्व अध्याय ५०।

पञ्ज धर्म सथाः—

मांस भक्ष्याः सुरापाना मुर्खाश्चाक्षर वर्जिताः । पशुभिः पुरुषाकारै भारक्रांतास्ति मेदिनी २१ । इति चाड्क्य नीति अध्याय ८ ।

बोटः - "जिब मित मारहु बापुरा सब का एके प्राण । हत्या कबहुँ न छूटि है कोटिन सुने पुराण २०१ । जीव घात न कीजिये बहुर लेत वह कान। तीरथ गये न वाचि हो कोटि हिरा दे दान २०२। तीरथ गये तु तीन जन चित चक्कल मन चोर । एकौ पाप न काटिया लादे दसमन श्रीर २०३। इति कबीरबीजक साखी प्रकरण।"

श्चात्मतीर्थं महातीर्थमन्यतीर्थं निरर्थकम् ५३ । चित्तमन्तरगतं दुष्टं तीर्थं स्नानैर्ने शुध्यति । शतशो ऽपि जलेथीतं सुराभागडमिवा शुचि ५४ । इति श्रीजाबालदर्शनोपनिषत् खण्ड ४ ।

सब का धर्म यथाः—

सर्वे प्रत्यक्ष धर्माणो जित द्रोधा जितेन्द्रियाः । दमेस्थितार्च सर्वे ते हिंसा भेद विवर्जताः ८ । इति महाभारत आख्यमेधिक पर्वे श्रध्याय ९२ ।

चारों वर्णीं का धर्म यथाः—

अहिंसा सत्यमस्तेय शौचिमिन्द्रिय निग्रहः । एतं सामासिकं धर्मं चतुर्वरायें ऽ त्रवीन्मनुः ६३ । इति मनुस्मृति अध्याय १० ।

तथा —
श्रिहिंसा पिय वादित्वमपेशुन्यमकत्पता ६७ ।
सामासिक समं धर्म चतुर्वएर्ये ऽ व्रवीन्मनुः ६८ ।
इति कूर्मपुराण अध्याय २ ।

अहिंसा सत्यमस्तेयमकाम क्रोध लोभता।
भूतिमयेहिते हा च धर्मीयं सार्व बार्णिकः २१।
इति भागवत स्कन्ध ११ अध्याय १७।

नोट--परेषां प्राण रचार्थं वदाम्ये वातृतं वचः ३९४। इति पद्मपुराण सृष्टि खण्ड ऋष्याय १८।

त्राह्मरा धर्म यथाः—

ब्राह्मणानां सदा भक्ष्यं इविष्यं च निरामिषम् । श्रामिषस्य परित्यागात् सूर्यवचेजसाक भवेत् ५४।

किञ्चित सूर्यप्रहण और चन्द्रप्रहण का निर्णय।
 प्रहण में अन्न खाने का निषेध यथाः

सुर्य प्रहरोतु नारनीयात् पूर्वं यांश् चतुष्टयम् । चन्द्रयहेतु या यां स्त्रीन् वाल वृद्धातुरैविनेति । इति माधवीये वृद्ध गौतमोक्तेः

नोट-शब्दकलपद्रुम प्रहरूण शब्दान्तरगत में भी ऐसा ही है। श्रहोरात्रं न भोक्तव्यं चन्द्र सूर्य प्रहो यदा। मुक्ति दृष्ट्वातु भोक्तव्यं स्नानं कृत्वा ततः परमू। इति विष्णुधर्माकं। नित्य नृतं भांडेन कर्तव्यः पाक एव च। अथवा पक्ष पर्यंतं ततस्त्याज्यं मनीषिभिः ५५ । इति ब्रह्मवैवर्तपुराण श्रीकृष्णजन्मखंड अध्याय ८३।

प्रहर्ण में वाल वूढ़े रोगी घादिकोंके घन्न खानेका निर्णय यथाः— वाल वृद्धातुराणां तु प्रहयामात् पूर्वमेक यामो निषिद्धः। इति कर्कानुसारिसोक्ते।

प्रहण में सब वर्णीं को सृतक यथाः—

सर्वेषामेव वर्णानां सृतकं राहु दर्शने । इति हेमाद्रौ षट्त्रिंशोक्ते ।

प्रहण में अशुद्ध न होने वाली बस्तुयें यथाः —

श्चारनालं २ पयस्तकं द्धिस्नेहाज्य पाचितम् । मणिकस्थोदकं चैव न दुष्येद्राहु सूतके । इति भर्गवार्चन दीपिकायां ज्योतिर्निवन्ध मेथातित्थोक्ते ।

तिल और कुरा से बस्तुयें अशुद्ध नहीं होतीं यथाः-

श्चन्नं पक्तमित्याच्य स्नानं च वसनं गृहे। बारि तकारनालादि तिल दभैं ने दुष्यति।

इति मन्वर्थमुक्तावस्योक्ते।

## परम घरम स्नुति विदित श्रहीँ सा १२१। इति मानसरामायण उत्तरकांड।

प्रहण में अन्न खाने का प्रायश्चित यथाः—

चन्द सूर्य प्रहे मुक्त्वा प्राजापत्येन ३ शुद्धचित । श्रास्मिन्नेव दिने मुक्त्वा त्रिरात्रेणीव शुद्धचतीति । इति माधवीये कात्यायनोक्ति

सूर्यप्रहण में कुरुचेत्र स्नान का महापुण्य यथाः—

गंगा कनखलं पुरयं प्रयागः पुष्करं तथा। कुरुचेत्रं महापुरयं राहु प्रस्ते दिवा करे। इति देवी पुरागोक्ति

उक्त प्रसङ्ग, इति कमलाकर भट्ट कृत निर्णयसिन्धु परिच्छेद १ प्रहम्। निर्णयान्तरगत ।

सूर्य प्रहण और चन्द्र प्रहण के समय स्नानदानादि कार्या के लिये सब जल गङ्गा जल के समान होजाते हैं यथाः—

सर्वे गङ्गा समं तोयं राहु प्रस्ते दिवाकरे। सोमग्रहे तथैवोक्तं स्नानदानादि कर्मसु २७। इति पाराशरस्मृति अध्याय १२।

## श्रहिसा परमो धर्मो विपालां नात्रं संशयः।

नोट—कात्यायनस्मृति खण्ड १० श्लोक १४ में श्रोर गोभितस्मृति जपाठक १ श्लोक १५० में भी ऐसा ही है।

१- तीन घरटे का एक यां (पहर ) होता है। २ अर्क दवाई वगैरह । ३ प्राजापत्यव्रतके लिये मनुस्मृति ऋध्याय११ ऋोक २१२ श्रीर याज्ञवल्क्य स्मृति ष्राध्याय ३ श्लोक ३१९ से ३२० तक देखो। वृहत्पाराशरीय स्मृति अध्याय ७ ऋोक ३१२ में तिखा है कि स्त्री रजस्वला होने पर पहिले दिन चाएडालिनी दूसरे दिन इस घातिनी और तीसरे दिन धोबिन सद्श रहती है चौथे दिन शुद्ध होती है। ३१३ और ३१४ ऋोक में लिखा है कि त्रिशिरा नाम दैत्य ब्राह्मण् को इन्द्र ने मारा उसकी हत्या का फल खियों को दिया है तब से स्त्रियें रजस्वला होने पर ३ दिन श्रशुद्ध रहती हैं तबसे इनके छूने देखने और रित करने का विशेष दोष लिखा है। सहवास और साथ पलँग पर लैंडने का निषेध, इति मनुस्मृति अध्याय ४ स्रोक ४०। तेज बुधि बल सहबास करने से नाश हो जाता है, इति मनुस्मृति अध्याय ४ श्लोक ४१ श्रौर ४२ भी देखो । उसके हाथ का छुवा अस्र न खाय, इति मनुस्मृति अध्याय ४ श्लोक २०८। उसको भोजनकाल में न देखे, इति मनुस्मृति अध्या- दया सर्वत्र कर्तव्या त्राह्मणेन विज्ञानता ३९ TX इति देवीभागवत स्कंध २ अध्याय ११ ।

हिंसा चैव न कर्तव्या चैध हिंसा तु राजसी।

ब्राह्मणैः सा न कर्तव्या यतस्ते सात्विकाः मताः।

इति शब्दकल्पद्रुम हिंसाशब्दान्तरगत श्राद्धविवेक टीका गोविन्दानन्द धृत बृहन्मनु का वचन।

य ३ ऋोक २३९ । उसके छूनेका निषेध, इति वृहत्पाराशरीयस्मृति अध्याय ७ ऋोक ३०९ । अङ्गिरास्मृति ऋोक ३८ और आपइतंब स्मृति अध्याय ७ ऋोक १ से ४ में लिखा है कि रजस्वला स्त्री पहिले दिन चाएडाली दूसरे दिन ब्रह्मचातिनी तीसरे दिन घोषिन के समान रहती है चौथे दिन में शुद्ध होती है और पाराशरस्मृति अध्याय ७ श्लोक २० और पद्मोत्तरखण्ड अध्याय ७० श्लोक ४० में भी ऐसा ही है । उशनस्मृति अध्याय ५ श्लोक ३२ में लिखा है कि रजस्वला स्त्री को न छुये। स्त्री को रजोदर्शन होने पर क्या कर्तव्य है, देखो व्यासस्मृति अध्याय २ श्लोक ३० से ४० तक ।

हिंसा ऽ नृत परा लुव्धाः सर्व कर्मोप जीविनः । कृष्णाः शौचपरिम्नष्टास्ते द्विजाः शूद्रतां गताः ५९ । इति नारदीयपुराण पूर्वभाग श्रभ्याय ४३ । खी को भी हिंसा करने का अधिकार नहीं है यथा:-

प्रमादोन्माद रोषेच्या वश्चनं चातिमानिताम् । पेशुन्य हिंसा विद्वेषमहाहंकार धूर्नताम् ३४ । नास्तिक्यं साहसं स्तेयं दम्भान्साध्वी विवर्णयेत् ३५। इति व्यासन्मृति श्रध्याय २ ।

नोट—''श्रधार्मिको नरो यो हि यस्य चाप्यनृतं धनम्। हिंसा रताश्च यो नित्यं नेहासौ सुख मेधते १७०। इति मनुस्मृति अध्याय **७।** 

> श्रुतिस्तु वेदो विज्ञेयो धर्मशास्त्र तु वै स्मृतिः। ते सर्वार्थेष्वमीमांस्ये ताभ्यां धर्मो हि निर्वभौ १०। इति मनुस्मृति अध्याय २।

श्रर्थ—वेद को श्रुति श्रीर धर्मशास्त्र को स्मृति कहते हैं ये सब प्रयोजनों में श्रतर्क हैं श्रर्थात् इनमें किसी प्रकार का तर्क नहीं करना चाहिये क्योंकि सम्पूर्णधर्म इन्हीं से प्रकाशित हुये हैं १०।

तमः शुद्रोरजः तत्रे बाह्यणे सत्वमुत्तमम्। इत्येवं त्रिषु वर्णेषु विवर्ते ते गुणास्त्रयः ११। इति महाभारतस्त्रश्यमेधिकपर्वे स्रथ्याम ३९।" ब्राह्मण को मछली खाना मना है थथाः— न भक्षणीयं वराहं मांसं मत्स्याश्र<sup>®</sup> सर्वशः । श्रभक्ष्या त्राह्मर्णैरेते दोक्षितैश्र न संशयः ३६ । इति बाराहपुराण श्रष्याय १२७।

"नागर-इम एक प्रश्न मछली खानेवालोंसे करते हैं कि-मछली खानेवाले सुवर के मांस को क्यों नहीं खाते ?

बादी सुवर का मांस श्रशुद्ध होता है। नागर-क्यों ?

वादी-सुवर विष्ठा खाता है।

नागर-तब मछली भी तो विष्ठा खाती है। अलावा इसके और भी गौ, सुवर, कुत्ता, मरे हुए मनुष्य हिन्दू मुसलमानादि मुर्ते का मांस खाती है, अर्थात् जिस जीव का मांस विष्ठा थूक खबार वगैरह उसके सामने आयगा तो वह खाजायगी। इससे सुवर से मछली ज्यादा अशुद्ध हुई। इस प्रत्यच प्रमाण से मछली खानेवाले भंगी (टट्टी साफ करनेवाला) और म्लेच्छ ( मुसलमानादि) से भी ज्यादा नीच हुए, मछली का ही ज्यादा प्रचार होने

अ मछली मारने के विषय में पाराशरस्मृति ऋध्याय २ स्होक ११-५२ देखो ।

से बंगाल श्रौर उड़िया श्रादि देश म्लेच्छ देश कहे जाते हैं. इस प्रमाण से बिहार (मिथिला) देश को भी म्लेच्छ देश कहेगे, क्यों कि यहां के ब्राह्मण ही मछली मांस खाते हैं। श्रौर मांस भी किसी का शुद्ध हुवा है।

वादी-बस इसके सिवाय और तो कोई दोष नहीं है ?

नागर-बड़ाभारी दोष यह है कि सब जीवों के मारने की हत्या लगती है, देखो धर्मशास्त्र मनुस्मृति अध्याय ११ स्लोक ११६ से १४५ तक और पाराशरस्मृति अध्याय ६ स्लोक १ से २१ तक। अब आप ही कहिये कि हत्यारे का साथ कौन करें, जिनको अपना पेट ही भरना है और धर्म से मतलब नहीं है, जिसको यमराज के यहां यमदूतों की मार सहना हो वह कर सकता है। और इसी हत्यारे के कारण कोई लोग इस लोक में और कोई पर लोक में दुखी होते हैं और यही मनुष्यों के बन्धन का हेतु है। और दूसरी बात यह है कि चमड़े. मांस हड़ी का ठेका ब्राह्मण, च्रात्रों, वैश्य और शूरों ने लेलिया तो कसाई और चमार लोग विचारे क्या रुजगार करेंगे। हां! एक बात अच्छी है कि जब तुमने उनके नरक का स्टांप खरीद लिया तो उन्हें स्वर्ग मिलेगा यही तुग्हारा पुण्य हैं। और पापों का स्टांप पास ही रक्खे हो इसमें क्या पूछना है।"

🕸 निर्देशी हिंसक मांस मछली मिद्रा खानेवाला वण्णव नहीं होसकता क्योंकि विष्णु सब प्राणियों में परिपूर्ण हैं (पृष्ठ ९ देखो) प्राणियों को दुख पहुँचानेसे विष्णु की हिंसा होगी और श्राज तक अपने इष्टकी हिंसा किसीने नहीं की । पुनः "जीवप्राख धारणे" घातु पर भी घ्यान दो । बिना द्या धर्म के वैष्णव होना भूठा है बहरूपिया कैसा वेष बनाये है, वह बंचक है यथाः— दयाधर्म परो नित्यं विष्णुधर्मेषु तत्पराः ३।

इति पद्मोत्तरखरड अध्याय १३०।

श्रर्थ — जब मनुष्य सदैव द्याधर्म में रत रहता है तब विष्णुधर्म में तत्पर होता है ३। विष्णुके पाँच संस्कारों को भी धारण करना पड़ता है, शंख-चक्र की या घनुष-वाण की तप्त छापर तुलसी काष्ठ २ ऊर्द्धपुराड्र तिलक ३ राम या छव्सा मन्त्र ४ विष्णुनामान्त दास नाम ( रामदास या कृष्णदास ) ५। इसके श्रतावा बैंध्णवधर्मप्रन्थोंके श्रनुकृत चलना पड़ता है श्रीर वैध्णव धर्म में हिंसा लेशमात्र नहीं है तब विष्णु को मांसादि अशुद्धचीचों का भोग कैसे लग सकता है। श्रौर श्रीरामसंस्कार वर्जित को पशु कह सकते हैं (पृष्ठ १०० की टिप्पणी में ऋोक २६)।

क्ष तिचत्रंयदि रूपयोवनवती साध्वी भवेत्कामिनी। तिश्चत्रंयदि निर्दया ऽपि पुरुषः पापं न कुर्योत्कचित १२२। इति शुभाषित स्त्नाकर मिश्र प्रकरण।

जिनकी बुद्धि पापारक्त हो रही है, धर्म जिन में लेश मान भी जहीं है वही कह सक्ते हैं कि भगवत धर्म में जीव हिंसा है और अगवत को मांस मछली समर्पण करना चाहिये। सच्छाखों में तो अगवत धर्म में लिखा है कि प्राणि मात्र में बाहर भीतर ईश्वर को ही देखें और आकाशवत सब जीवों में ईश्वर परिपूर्ण हैं। वहीं पण्डित है जो ऊँच नीच प्राणी मात्र को ईश्वर भाव जान कर पूजे और सम दृष्टि देखें। अन्तरयामी ईश्वर की दृष्टि से सब को प्रणाम करें देखिये।

भगवत धर्म यथाः—

हत ते कथिष्यापि एम धर्मन् सु मंगलान् । याच्छ्रद्धयाचरन्मत्यों मृत्युं जयित दुर्जयम् ८ ।
मामेव सर्व भूतेषु वहिरंतरपाष्ट्रचम् ।
ईक्षेत्रात्मिन चात्मानं यथा स्वममलाश्रयः १२ ।
इति सर्वाणि भूतानि मद्भावेन महाद्युते ।
सभा जयन्मन्यमानां ज्ञानं केवलमाश्रितः १३ ।
ब्राह्मणे पुरुकसे स्तेने ब्रह्मण्ये ऽके स्फुलिंगके ।
ब्रह्मर् क्रूरके चैत्र समहक् पंहितो मनः १४ ।
विसृत्य स्ममानान्स्तान्दशं ब्रीहां चं देहिकोम् ।
प्रणमेहंडवद्ग्मानास्वचांद्राल्गोस्वरस् १६ ।

अयंहि सर्व कल्पानां सभ्रीचीनो मतो मम । मद्भावः सर्वभृतेषु मनोवाकाय द्वतिभिः १९ । इति भागवत स्कन्ध ११ अध्याय २९ ।

अर्थ-श्री कृष्णजी उद्भव से कहते हैं कि हे उद्भव मैं सुमंगल अपने धर्म (ईश्वर धर्म ) तुम से कहता हूँ, जिन धर्मी को श्रद्धा के सहित करने से मनुष्य दुर्जय मृत्यु को जीत लेता है ८। निर्मल चित्तत्राला पुरुष सव प्राणियों श्रीर श्रपने में भी बाहर भीतर मुक्तको हो देखे मैं आकाश की नाई वाहर भीतर सब में सदा परि पूर्ण हूँ १२। जो इस प्रकार ज्ञान में स्थित हो सब प्राणिमात्र को मेरा ही भाव जान कर पूजे वही पण्डित है १३। ब्राह्मण नीच जाति चोर विष्णु सूर्य स्फुलिङ्ग (अम्निकण्) सजन दुष्ट इन में समद्रष्टि से देखने वाला ही पिर्देत कहाता है (गीता ५।१८)। तात्पर्य यह है कि ब्राह्मण श्रीर गी को ऊँची दृष्टि से देखे, श्रीर अन्त्यज जाति को और सस्सी मछत्ती आदि जानवरों को नीची दृष्टि से देखें वह मूर्ख है १४। इस वास्ते ! सब प्राणियों के अन्तर ईश्वर बास करता है ऐसा जान कर हेंसी लज्या मान अपमाब सब को छोड़ कूकर चारडाल गौ गया आदि सब जीवों को (१७ श्लोक देखों) भूमि में लोट सास्टाङ्ग प्रणाम करें १६। हे उद्धव ! यह सब पत्तों मे मेरा पत्त सर्वोत्तम है कि मन बचन कर्म

से सब प्राणियों में मुक्ते देखें १९। सब प्राणियोंके साथ २ खस्सी (बकरा)मछली हिरनादि पशु पत्ती भी आगये। इस वास्ते मनुष्य किसी भी जीव की हिंसान करें, न मांस खाय ? नहीं तो वह ईश्वर द्रोही समभा जायगा और उसका लोक परलोक में कल्यान म होगा। बक्त श्लोक १२-१३ साची हैं। श्रीर जब स्वर्ग या बैकुंठ जहाँ कि मल की गन्ध नहीं है वहां पर देवता देवी ईश्वर मांस खायंगे तो राचसों का क्या भोजन है। मांस मद्य देवतावों का भोजन नहीं है न मनुष्यों का भोजन है किन्तु राज्ञसों का भोजन है। देखो मनुस्मृति अध्वाय ११ श्लोक ९६ यथा—यन्न रक्तः पिशाचन्तं मद्यं मांसं सुरासवम् । तद्त्राह्मणेन नात्तव्यं देवा-नामरनताहविः । + श्रीर वृद्धारीतस्मृति श्रभ्याय ९ श्लोक २८६, पद्मोत्तरखण्ड अध्याय २५५ श्लोक १०१, महाभारत अनुशासन-पर्व श्रध्याय ११५ रलोक २७, यजुर्वेद श्रध्याय २ मन्त्र १९, साम-वेद छन्दर्शाचिक अनेयपर्व अध्याय १ खस्ड ८ ऋचा ८ भी देखो।

सर्वमात्मिन संपर्यत्सचासच समाहितः। सर्व झात्मानि संपर्यन्नाभमें कुरुते मतः ११८। इति मनुस्मृति ऋध्याय १२।

<sup>+</sup> मन्वर्धमुक्तावली टीका मं इस उलोक का ९५ नंबर है कुलूकमट्टभी लिखते हैं कि "मांसंच प्रतिविद्यम्"।

अर्थ — सतासत भाव को जानता हुआ (ब्राह्मण) सब जीवों मैं समान देखे क्यों कि सब जीव समान देखने से रागदीय पैदा नहीं होता, राग दोष न होने से अवर्म में मन नहीं जाता ११८। जो सब जीवों में आत्माको देखता है बही ब्रह्म को प्राप्त कर सक्ता है अन्यथा नहीं, १२५ श्लोक देखा।

> सर्व भूनास्थमात्मानं सर्व भूतानिचात्मिनि । ईश्चत योग युक्तात्मा सर्वत्र सम दर्शनः २९ । यो मां पश्चित सर्वत्र सर्व च मिच पश्चिति । तस्वाहं न मणस्यामि स च मे न मणस्यिति ३० । सर्वभूतस्थितं यो मां मजत्येकत्वमास्थितः । सर्वथा वर्तमानो ऽ पि स योगी यि वर्वते ३१ । स्रात्मीपस्येन सर्वत्र समं पश्यिति यो ऽर्जुन । सुखं वा यदि वा दुःश्वं स योगी परमो मतः ३२ ।

श्रर्थ—जिसका मन योग x में स्थिर हो गया है उसकी हिंछि समान रहती है वह अपने को सब भूतों में तथा सब भूतों को अपने में देखता है २९। जो सब में मुफ्तको और सुफ्तमें सबको

<sup>🗴</sup> योगः संतर्हनोपायः कार्नसंगतियुक्तिपुइत्यंगरः ।

देखता है उसके लिये कभी में नष्ट नहीं होता और मेरे लिये कभी वह नष्ट नहीं होता ३०। जो सब प्राणियों में मुक्ते देखता है चौर मेरा भजन करता है वह सर्घा प्रकार से वर्तता हुच्चा भी मुक्त में ही रहता है ३१। हे अर्जुन! जो जानता है कि मेरे समान दुख सुख सब को होता है, सबको सम दृष्टि से देखता है, वहीं श्रष्ट है ३२।

आचार हीन हो हाएव नहीं हो सक्ते और आचार में खान पान ही लिया गया है, आचार मृद्ध असुर होते हैं । गीता १६।७) देवी संपदा के प्रहरा किये बिना हो हाएव नहीं हो सक्ते (गीता १६।१-३)। हिंसक कठोर होता है और आसुरी संपदा वाला होता है (गीता १६।४) और हो हाएब दयालु होता है। आसुरी संबद्ध बाला नरक में जाता है और आसुरी योनियों में (गीता १६।१६-१९)। जो भगवत को प्राणीभात्रमें नहीं देखते पुनः आचार मृष्ट भी हैं, आर हो हफाव धर्म में हिंसा और अनाचार की शिचा देते हैं उन की बुद्धि विचिन्न है याने वो पागल है (गीता ९।१२)।

सामान्यता तो किसी बैष्यव धर्म प्रनथ में विष्णु की मांस सहली का भोग लगाना खोर पूजा करना नहीं लिखा। किन्तु यज्ञ में भी खीरकल फूलादि से विष्णु का पूजन ब्राह्मणकी करना चाहिये ऐसा लिखा मिलता यथाः—

विष्णुमेवाभि जानन्ति सर्व यद्वेषु ब्राह्मणाः । पायसैः सुमनोभिश्चतस्यापि यजनं स्मृतम् १० । इति महाभारत सोच धर्म श्राध्याय ९२।

तथा च-

हिंसादि रहिबं कर्म यत्तदीश्वरं पूजनम् ८। इति श्रीजावाल दर्शनोपनिषत् खण्ड २।

श्चिष च—

पाने मनुष्य पडचर राममन्त्रसे विष्णुभगवानका पूजन करे यथाः

पडक्षरेण मंत्रेण हरि पूजन कुन्नरः ९८।

इति पद्मपुराण कियायोगसार खण्ड श्रध्याय १५।

शास्त्रोक्त विरुद्ध, वामपथ प्रवर्तक, विद्वद् ! पंडित ल्टन (लुट्टी) मा कि जिनका निवास, प्राम कोइलख, पोष्ट रामपट्टी (लोहट), जिखा दरभङ्गा, विहार प्रदेश में है। नम्बर१ की पुस्तक "धर्मनिर्णय पत्र" अर्थात् श्री १००८ विद्युदेव के निमित्त मत्स्य मांसार्पण करने का व्यवस्था पत्र नाम की अपने भतीजे श्यामा इत्त विद्यार्थी के नाम से सप्रमाण लिखी है, जो कि दुर्गाप्रशाद खत्रीद्वारा लहरी श्रेस काशी में छपी है। इसको खण्डन सरयू वास और शिवनन्दन मा ने किया, इन्हीं दोनों महाशयों के खंडत को परिंडत जी ने खरंडन किया, जिस पुस्तक का नाम नम्बर २ "धर्मानर्णय पत्र" अर्थात् मांस के विना विष्णुदेव की पूजा नहीं उचित है इसका व्यवस्थापत्र नाम की भी श्यामादत्तके नाम से सप्रमाण लिखी है, यह पुस्तक पं० रामनाथ का मैनेजर के प्रबंध में मैथिल प्रेस मधुवनीमें छपी है। अब इस नंबर२ की पुस्तकका खरडन समय पाके मैं कहाँगा। मैं नहीं जानता कि परिडत जी ने ऐसा क्यों. लिखा क्योंकि इस बात को सबही जानतेहैं कि बिना पशुघात किये मांस किसी प्रकार से भी पैदा नहीं होता, पशु काट ने से आत्मवव को प्राप्त होता है और मांस खाने से मलखाने के दोष को प्राप्त होता है, फिर आपने इस दुष्ट धर्म की क्यों शिचा दी (तद्तलं पशु घातादि दुष्ट धर्मेनिवोधत् ३६१ इति पद्मपुरासा सृष्टि खरड अध्याय १३)। लोहित और कृष्णकर्म, अर्थात् हिंसा मिले और केवल हिंसावाले कर्म करने वाले वैष्णव नहीं होसक्ते (नम्बर २ की पुस्तक के टाइटिलपेज पर श्यामादत्त भा वैंड्णव लिखा है ) केवल शुक्ष कर्म करने वाले ही वैंड्णव होसक्ते हैं (ऋध्यातम रामायण सर्ग ३ श्लोक २५)। हिंसा प्रिय तो उन्हों मनुष्यों को होती है जो पापी, कर खल निसाचर श्रीर श्रनीतझ हैं ( ये पाप निरताः क्रूराः ते ऽपि हिंसा प्रिया नराः २१ इति शिव पुराण जमासंहिता अध्याय ६। श्रीर बरनि न जाइ श्रनीति घोर निसाचर जो करहिँ, हिंसा पर श्रति प्रीति तिन्ह के पापहिँ कविष मिति १८३ इति वालकारा । कहुँ महिष मानुष धेनु खर काज खल निसाचर भच्छहीँ ३ इति सुन्दर कारा । इति रामचरितमानस)।

कमें ही मनुष्य से शुभाशुभ कराता है, पण्डित जी अपने पूर्वजन्म के कमें को कैसे मिटा सक्ते हैं, कर्माधीन ही पण्डित जी का नाम रूप और कर्तव्य हुआ। नाम भी आप का लुट्टी वा लूटन कर्तव्यानुसार हुआ, और इन नामों की व्युत्पत्ति भी ऐसी ही हाती है, याने

जो धर्म को चुरावै उसे खुटी कहते हैं, श्रीर जो धर्म का खण्डन करें उसे खूटन कहते हैं क्याः—

खुटीत्यस्य व्युत्पत्तिश्च । खुटते इति खुटी, प्रतिधाता र्थक खुट् धानोक्छ।दि इनि प्रत्यये प्रकृतेस्तुगागमे उनुवन्धे-त्संज्ञा लागयोः, छुत्वे कुद्रन्तत्वेन प्रातिपदिकत्वात्मौ-सौ चे ति, उपप्रादीधें इ ल्रूचादिति सु लोपे न लोपे च खुटी-इति सिध्यति । धातृनामनेकार्यत्वादत्र खुट् घातोः स्तेयार्थे शक्तिः, एवश्चयो धर्म्य खुटते चोरयति स खुटीति, खुटीति शब्द बाच्य वर्तमान व्यक्तौ-एतादशार्थस्यैन सम्बन् वात्, श्रन्थथा विष्णोमीस नैवेद्य निवेदनोक्तिस्तस्या न लुद्दीत्यस्य व्युत्विद्यस्या लूटन इत्यस्य व्युत्विद्यस्य व्युत्विद्यस्य व्युत्विद्यस्य व्युत्विद्यस्य व्युत्विद्यस्य क्रियते । लुनाति धर्मिमिति लूटनः, छेदनार्थक लू भातो-क्लादि ट न क् पत्यये श्रमुबन्धेत्संझा लोपयोः—कित्वा-द्वगुणाभावे इडभावे च क्रदन्तत्वेन प्रातिपादिकत्वात्सौ क्रत्वे विसर्गे तित्सिदिः ।

वकरे (खंडसी) भेड़े श्रोर मछली का मारना संकरी करण पाप है अर्थात् इनके बध करने में मनुष्य शंकर होजाते हैं (६५ पृष्ठ की १८ पंक्ति से देखी) यह भी परिंडत जी की विपरीत बुद्धि होने का कारण है

पिछत जी की उपाधि (टाइटल ) १ नम्बर और २ नक्बर दोनों पुस्तकों पर दिग्विजयो और पंचानन की लिखी है, हम नहीं जानते कि यह उपाधियें किसी ने दी हैं या अपने ही मनसे पुस्तकों पर छपा दी हैं। दिग्विजयी तो वहीं होसका है कि जो अहिंसा में तत्पर और सब जीवों का हित करने वाला हो, जैसी कि ऋषियों की आहा है, लिखा है कि—

अहिंसादि परः शान्तः सोपि वंद्यः सुरोत्तमैः । सर्वभृत हितो नित्यं सोभ्यत्यो दिग्दिनैः स्मृतः ५५। इति नारदीय पुराण पूर्वस्वरह अध्याय है। सर्व भूतों (जीवों ) की गणना में खस्सी हिरन मछली पशु पत्ती त्रादि सब त्रागये।

अथवा दिग्विजयी यह हो सक्ता है कि जो अपनी लाज शुरम छोड़ दे। किसीने ऐसा कहा भी है कि—

"एको लड़कां परित्यडय सर्व्यत्रविषयी भनेत्"

यदि अपयश भी होगा, तो क्या नाम न होगा। (पावन सस कि पुन्य वितु होई-वितु अघ अजस कि पावइ कोई ११२इति राम चरित मानस उत्तर कांड ) किसी प्राणी की जान न लेना इससे बड़ा कौन पुण्य होगा, किसी जीव की गर्नेन कोटना इससे बड़ा अब क्या होगा।

बाकी रही पद्धानन की उपाधि सो आपके लिये उपयुक्त ही है, क्यों कि आधारण ब्राह्मणोंको हिंसा के लिये एक मुख है आप हिंसा प्रवर्शक हैं आपको पद्ध मुख होना ही चाहिये। पद्धानन को अहिंसा में मतलब ही क्या है, क्योंकि एक तो महापशु दूसरे पद्धानन, क्या साचरा का विपरीत राज्या नहीं हो सक्ता। पद्धाननजी आप यह भी जानते होंगे कि जहां पद्धानन रहता है वहां शिकारी भी सूमते रहते हैं। पद्धानन को दिग्वजयी होते हुए भी शिकारी पर ध्यान अम्रस्य रखना चाहिये। इस संसार

जङ्गल में अनेक शिकारी घूम रहे हैं। आप तो नकली प्रकानम दिग्वजयी हैं, जो असली दशानन रावण खरदृष्णादि राचस दिग्वजयी थे, चत्रीके दो बचोंने उनकी भी शिकार खेल डाली और सत्यानाश कर दिया। श्रीरामजी ने कहा भा है कि "हम चत्री मृगया बन करहीं",तुम्हसे खल मृग खोजत फिरहीं दश" इति आरण्य कांड रामचरित मानस।

साधारण मैथिल ब्राह्मगों ने अपने ही लिये हिंसा श्रेय समसी, परन्तु श्रद्भुत उपाधि कारी पं० लूटन (लुट्टी) सा ने जगत कर्ता विच्यु भगवान के उपर भी डांका डाल दिया, और भगवान के लिये भी नित्य मत्स्य मांसार्पण की व्यवस्था दे डाली। श्रापने वास्तव में बड़ी ही शिकार मारी, आज वक यह येदका ममें भिथिला के किसी घुरंघर विद्वाल को न सूका। क्यों न हो आप के पांच मुँह में दस श्रांखें भी होंगी।

पंडितजी आप पंडितका स्वरूप पीछे छोड़ अपि आपका पंडित से विपरीत आचरण है (गीता ५ । १८)। आप सब कुछ तो पढ़ गये,यहां तक कर डाला कि दिग्विजयी और पछानन की उपाधि बनाली, परन्तु अपने को बन्धन से छुड़ाने का कोई प्रन्थ नहीं पढ़े, और लिखा भी आपके विषय में ऐसा ही है कि —

ब्रुयाऽध्ययनेनात्र हृद् वंघ करेण च । पृष्ठितव्यं तदेवाशु मोचयेद्भव वंघनात् ५२ । इति देवी भागवत स्कन्ध १ ऋष्याय १४। श्रीर

श्रधीत्य चतुरो वेदान्सर्व शास्त्राण्यनेकशः। ब्रह्मतत्वं न जानाति दवी पाकरसं यथा ६५। इति मुक्तिकोपनिषद् श्रध्याय २।

मनुस्मृति अध्याय १२ श्लोक १२४ - ब्रह्माभ्येति परंपदम्, इसके योग्य नहीं हुए !! इसी प्रकार आंखों में धूल भोंक पञ्जानन जी दिग्विजयी बनते हैं।

वैष्णवानन्य तुलसीदासजी के मानसका कनीयस् पीयूष यथाः—

यथाः—
परिहत सरिस धर्म निहाँ भाई, पर पीड़ा सम निहाँ अधिमाई
नर सरीर धरि जे पर पीरा, करिहाँ ते सहिहाँ महाभन्न भीरा
करिहाँ मोक बस नर अब नाना, स्वारथ रत परलीक नसाना ४१।
पर उपकार बन्नन मन काया, संत सहज सुआब खगराबा
संत सहिहाँ दुख परिहत लागी, पर दुख हेतु असंत अभागी १२६।
इति मानस उत्तर कांड।

समयातुकूल जैसा होना चाहिये वास्तव में ऐसा ही है

षथाः -

मत्स्यामिषेण नीवंति दुइंतश्चाप्य जीविकाम् । घोरे किल्युने विम सन्त्रे पाप रता जनाः ४० । वृथाइंकार दुष्टाश्च सत्य हीनाश्च पंडिताः ३१ । सूद्र तुरुषा भविष्यंति सन्त्रे पर्णाः कक्षौयुने । उत्तर्गनोतां यांति न चाश्चोत्तमतां तथा ३६ । इति नारदीय पुराण पूर्वखंड श्राच्याय ४१ ।

अधिक लिखना अधिक है विचार शील विज्ञ पुरुषों के लिखे यही अलम् हैं - भर्जी ने नीति शतक में कहा भी है कि -

अज्ञ: सुखमाराध्यः सुखतरमाराध्यते विशेषज्ञः ।
ज्ञान त्व दुर्विदग्धं ब्रह्मापि तं नरं नरज्ञयति २ ।

वर्णाश्रम के धर्मको त्राह्मणों ने छेदन कर ही दिया, एक वैद्याव धर्म ही मनुष्यों के कल्याणार्थ बचा था सो राज्ञस मैथिल ब्राह्मणों ने इस पर भो डॉका डार दिया।

हम आंख से देख रहे हैं कि पड़े लिखे जो विद्वार मैथित बाह्यण हैं और मांस मछली को खाते हैं, वे गृद्धवत् हैं, जैसे गृद्ध आकाश में सबसे ऊपर रहता है और नीच से भी नीच सुदें पर गिरता है। मूर्ख मैथिल बाह्यण को मांस मछली खाने हैं वो सुवरवत् हैं, (विष्ठा को मछली खाती है और मछली को मथिल बाह्मण खाते हैं) जैसे सुवरको दाल भात दूध रोटी खानेको दो तब भी विष्ठा का खाना नहीं छोड़ता परन्तु यह भी ठीक है किसीने कहा है कि—

दोहा— उत्तम थल सेवें सुजन नीच नीच के बंस।
सेवत गीथ मसानको मानसरोवर हंस १।
उत्तम को उत्तमु चहै चहै नीचको नीच।
सुगना कोयल खात फल वक मछली विच कीच २।

यह संसार का नियम है कि बड़े समुद्रवत और छोटे पोखरा वत होते हैं, परन्तु जिस प्रकार समुद्र का अपीने योग्य जल होता है और पोखरे का पीने योग्य जल होता है इतना दोनों में अन्तर जानो । आशय यह है कि जितने छोटे होते हैं उतना ही छोटा अभर्भ करते हैं।

नोट-" मैंने सुना हैं कि मिथिला में वैष्णव विरकों के पुरोहित पूजा पाठ करानेवाले मैथिल बाइएण ही हैं जो मांशासी (राइस) हैं, और वह मैथिल अपने यजमान महन्तादिकों से नकली हिंसा कराते हैं। जैसे दशहरे आहि में कुम्हड़ा आदिका पशु बनाके काटना। यह वैष्णव यदि विद्वान् होते और विचार शील होते तोऐसाक्वों होता। (मेरा बनाया राममन्त्रार्थ देखेाजो कि

जिला मुजण्फरपूर, मु० पो० चुरोत में पं० पुरुषीत्तमदास जी के पास मिलेगा ) क्या नकली पशु मारन हिंसा नहीं है, यदि हिंसा नहीं है तो फिर नकली पशु क्यों काटते हैं, क्या ५ वर्ष के बच्चे हैं जो खेल करते हैं। नकली पशु काटने का मतलब क्याहै। एक तो अवैष्णव को छूना वाँ उसके हाथका खाना, उससे बात चीत करना, प्रणाम करना निंदनीय है (पृष्ठ ११८-११९ में देखों श्रीर १२५पृष्ठमें ९३ रत्नोक देखा। दूसरे मांस खानेवाला महापापी होता है (पृष्ठ ७४ देखों)। तीसरे जो ब्राह्मण हिंसक है वह अधर्मी हैं ( आगे अधर्मी बाह्मस के लक्ष्म में देखों )। चौथे अवैष्स्य ब्राह्मण नीच होता है ( अवैष्णव ब्राह्मण नीच होता है में आगे देखो)। उक्त चारों वार्ते मैथिल ब्राह्मणों में दिखाती हैं। फिर उनको अपना पुरोहित बनाना अति ही निन्द्नीय है। मांशासी मैथिल त्राह्मणों को दान देना (११६-११० पेज देखो) विद्या पढ़ाना इत्यादि अपने परलोक का नाश करना है, सर्प को दृख पिलाने से बह जहर होजाता है जैसे जानो । यह वैदण्व धर्म के मत से बाहिर है और अशोभित है। वैष्णव विरक्तों को इस पर अवश्य **म्बान देना चाहिये।**"

यदि कोई वेद शास से हिंसा की विधि बतावें तो उसे सत्यन माने, क्यों कि पहिले हिंसा तो कोई घमें नहींहै,दूसरे मांसा हा-

रिवों का हिंसा धर्म बताना धोखा देना है। कील (बाममाणीं) धर्मवालों ने वेद शास्त्र सूत्र पुराण रामायण महाभारतादि प्रन्थों में हिंसा मिलाई है। यहाँ तक अभइय और जीव हत्या की विशेता परडाली है. कि जब हम वेद और धर्म शास्त्रादि प्रन्थोंको हाथ में लेकर पढ़ने लगते हैं, उस वक्त हमका ऐसा प्रतीत होता है कि हम वृचङ्खाने (कसाई खाना) में बैठे हैं खोर सब प्रकार के जानवर पत्ती आदिकों के मारने खाने का निर्णय कर रहे हैं। वंड़ दुख की बात है कि यदि मूर्छ अभस्य भइण और जीव इत्या को धर्म माने तो अले ही माने, परन्तु विद्वान कैसे इसको धर्म मानते हैं हम नहीं जानते । क्या विधि (यज्ञादि ) से मारने में पशु को सुख होता है स्त्रीर वो यह चाहता है कि मुसे विधि से मारें। पशु को विधि वा वे विधि से किसी प्रकार भी मारो दुख ही होगा। किसी जीव को दुख न देने को ही धर्म कहते हैं, इसी वास्ते धर्म प्रन्थ वने हैं, कर्म काएड में यम में पहिले अहिंसा शब्द क्यों आया है इस पर विचार करो । श्रीर श्रपने दुख सुख से दूसरे जीवधारियों का दुख सुख सममलो। श्रहिंसा से सुन्दर रूप अंगों की पुढ़ोलता आयु बुद्धि सत्य; बल स्मृति सज्जवपना श्रादि प्राप्त होते हैं, देखो महाभारत अनुशासन पर्व अध्याय ११५ रलोक ८।

जो श्वात्मा देवी देवताओं में है वही श्वात्मा खस्सी मछली श्वादि सब शरीरों में है, एक जीव के खाने वाले, दूसरे जीव को ही पापी कहते हैं। इस लिये धर्म्मवान पुरुष देवी देवताश्चोंकी ही नहीं किन्तु जंतु सात्र की पूजा करें यथाः—

## सर्वत्र पूज्यते जन्तुर्धर्मवानात्र संशयः ३८। इति नारदीय पुराण पूर्वभाग व्यथ्याय ३१।

यदि आप खत्सी मछली आदि की पूजा नहीं कर सक्ते तो उसे महाद्ग्ड भी न दीजिये। मनुष्यमात्र को चाहिये किसी को पालै न तो मारे भी न। देवी की पूजा अन्न फल फूल से अच्छी तरह हो सक्ती है (देखो पृष्ठ १९ में ८५ रलोक से) मारवाड़ जज युन्देलखण्ड मालवा गुजरात आदि देशों के लोग इसी प्रकार से पूजा करते ही हैं। और विहार बङ्गाल उड़ीसा आदि देशों के लोगों से विशेष रूपवान बलवान ऐश्वर्ण्यवान द्यावान भर्मवान और जीवदान बाले होते हैं। यदि आप किसी जीव को देवी या सज्ज वां श्राह में या सामान्यता काट कर भन्नण करेंगे तो विष्कु को काट के भन्नण करने में क्या संदेह है। और क्या फिर इससे आपकी गति हो सक्ती है। और क्या इसको वामाचार न कहेंगे! जो धर्मा प्रत्थों में स्पष्ट है यक्षाः—

विद कामादि दुष्टात्मा देव + पूजा परो भवेत्। दंभाचार स विद्येय: सर्व पातिकभिः समः ३९। इति नारदीय पुराण पूर्वभाग अध्याय ३३।

पाखरड शब्द का अर्थ देखा "देखी बिल पाखरड" मैं। गीता ३। ६ भी देखा। पं० लूटन का अभिप्राय विष्णु के भक्त होने पर नहीं है यह एक प्रकार का विष्णु भगवान का उपहास करना है, लूटन कट्टर शाक्त जीवहत्यारा और मांस भन्नी है।

आप जो देवी को पशु बिल देते हैं उस हत्या का फल देवी नहीं भोगेगी, क्योंकि धर्मशास्त्र मनुष्यों को ही बने हैं (इत्येतन्मा नवंशास्त्र मनु १२।१२६) वह हत्या कर्म बिना भोगे आपका छुटकारा नहीं होगा यथाः—

> अवश्यमेव भोक्तब्यं कर्मणां हाक्षयं फलम् । नाभक्तं क्षीयते कर्म कल्प कोटिशतेरपि ६९ । इति नारदीय पुराण पूर्वभाग अध्याय ३१।

यदि श्राप गृहस्थ वैष्णव होंगे तब भी सब जीवों का हित चाहते हुए विष्णु को पूजा करना पड़ेगा यथा —

<sup>+</sup> विष्णु।

## कर्मणा मनसा वाचा सर्व लोक हिते रतः। समर्चयति देवेशं क्रियायोगः स उच्यते ४२।

इति नारदीय पुरास पूर्वभाग ऋध्याय ३३।

गृहस्थ अपने धर्म को दया से युक्त करें ( गृहस्थस्तु दया युक्तो धर्ममेवानु चिन्तयेत् ४२ इति पागशर स्मृति अध्याय १२, पृष्ठ १३ में २३ श्लोक भी देखा )। अतएव विष्णु की मत्स्य मांस का भन्नण कराना इन्द्रीं लोलुपता श्रीर पाखरड श्रवश्य है। लघुकौ मुदी पुनः सिद्धान्तकौ मुदी उणादि के प्रथम सृत्र (कृवापाजिमिस्वदिसाध्यश्र्भ्यउग् ) की व्याख्या में लिखा है कि "साध्नोति परकार्यमिति साधुः" श्रौर साधु के पर्य्याय वाची शब्द अमरकोष ब्रह्मवर्ग श्लोक ३ में इस प्रकार आये हैं कि - "महाकुल कलीनार्य सभ्य सजन साधवः"। इस प्रमाण से आप जीवों के कार्य साधने वाले नहीं हुए, किन्तु उनके प्राणः धालक हुए और चुदुकुल अकुलीन अनार्य (म्लेच्छ) असभ्य असजान और असाधु में आप की गणना हुई, और वास्तव में दही ठीक है। साधु अभद्य नहीं खाते श्रौर निर्दयी नहीं होते साधु सतासत के विचार में प्रवीण हाते हैं। भला ऐसा कोई कहैगा कि साधू खस्सी और मछली को खाते हैं।

बकरी



अब आप यह बताइये कि इस बकरी में क्या बीज अच्छी है, इसका मुँह अच्छा है या पैर अच्छे हैं या पेट अच्छा है, सब में मल ही मझ तो भरा है छी! छी!! इसी के बच्चे को खाजाते हो, तुमको इसके काटने में दबा नहीं आती। जो बकरी के बच्चे को काटते हैं या मांस मोल लेकर खाते हैं, उन्हें भी यमपुरी में यमदूत मारकाट के खाते हैं।

जिस प्रकार मनुष्यों के शरीर १२ मलों से बने हैं, इसी प्रकार खरसी आदि जानवरों के शरीर भी १२ मलों से बने हैं १ देह को चिकनई २ बीर्य ३ रुधिर ४ शिर के भीतर का गूदा ५ मूत्र ६ विष्ठा ७ नाक का मौल ८ कान का मैल ९ कफ १० आश्रु ११ आंखों का कीचर १२ पत्नीना। देखो मैत्रायरपुपनिषद् प्रषाठक १ श्रुति २ । मनुस्मृति अध्याय ५ श्लोक १३५ और अध्याय ६ श्रुति २ । अनुसमृति अध्याय ५ श्लोक १३५ और अध्याय ६

चकरी बचा कहत है मैं श्रिल से हूँ दीन ।
चाहै मारो छोड़ दो यह तुमर आधीन।
वह तुमरे आधीन आप हैं विप्र दयालू।
मेरा है अपराध कवन! हूँ रौरे पालू।
वालक सम निज प्यार करो! क्यों काटो अतरी।
रो रो के मर जाय! माय मेरी यह बकरी १।
मछली



भला यह तो बताश्रो कि जो यह मछली पानी में रहती हैं आपकी पृथ्वी से कोई संबंध नहीं रखती इसे क्यों खाजाते हो यह कितनी बड़ी दीन है, न किसी को मारती न डांटती। श्रीर इसमें कौनसी चीज अच्छी है. ये विष्टा शृक खखार मुर्दा, मरे पहा गाय बैंत सुवरादि के मांस की खाजाती है श्रीर इसे श्राप खाजाते हैं, इससे तो श्राप मछली से ज्यादा वो अकल हैं क्या कि मछली को विष्टा श्रादि खाने का ज्ञान नहीं है श्रीर श्राप को तो ज्ञान है—अब तो भला मछली खाना छोड़ दोजिये श्रीर इस श्राह्मण धर्ममें लात न मारिये किन्तु ब्राह्मणधर्म में लात मारिये। जात ब्राह्मण, कर्म म्लेच्छ का।

खस्मी पुखरा तीर पर चरता ! कहती मीन ।
हम तुम दोनों जगत में हैं करमन के हीन ।
हैं करमन के हीन दीन दुनियां में कोई।
सुनता नहीं पुकार गुजारा कैसे होई।
मैथिल डड़िया देश श्रीर पूरव वंगाला।
हमरे तुमरे शत्र नीच हैं ये कंगाला २।

श्चित श्रल्प प्रत्यत्त में मांस खाने के शरीर का बलाबल बताते हैं। यदि मांस खाने से मगज में ताकत होती है और मगज
जोरदार होता है श्रकल बढ़ती है तो बिल्ली कुत्ते गीदड़ादि
क्यों नहीं मिडिल पास कर लेते, श्रीर विहार बङ्गाल उड़ीसा
स्थां नहीं मिडिल पास कर लेते, श्रीर विहार बङ्गाल उड़ीसा
स्थादि देशों में क्यों मांस खाने वाले बहुत लोग वे श्रकल श्रीर
मूर्ख हैं। यदि मांस खाने से शरीर में बल होता है तो मांस खाने
वाले देशों के मनुष्य मांस खाते हुये क्यों श्रवल होते हैं, जैसे
बङ्गाल उड़ीसा श्रादि । श्रीर बुन्देलखरूड मालवा मारवाड़ झजादि
देशों के लोग मांस नहीं खाते दूध दही घी मेवा मिठाई फल फूल
कन्द श्रीर श्रन्न खाते हैं मांस बिलकुल नहीं खाते वो क्यों बल
बन होते हैं। यांने यहां तक वलवान होते हैं कि इन देशों का
एक र श्रादमी भी बङ्गाल उड़ीसा के दश र पांच र श्रादमियों
को मार सक्ता है। फल फूल वास पात खाने वाले हन्द्रमान ने

लङ्का में मांस खानेवाले राचसों का क्यों अत्यन्ताभाव कर डाला। मांस खाने वालों से अन्न फल फूल घासादि खाने वालों को विशे व गुस्सा ज्ञाती है ज्ञौर फिर उनकी गुस्सा को कोई रोक नहीं सक्ता क्यों कि वो वार२ हिंसा नहीं करते -जैसे हनूमान कृष्णादि। श्री कृष्णचन्द्र जी ने घर के दूध दही के खाने के अलावा शौक से बस्ती का भी दूध दही मक्खन घी मिश्री खाया, तथापि चन्होंने मांस कभी नहीं खाया, परन्तु मांश खानेवाले दैत्यों का सत्यानाश कर डाला । इस वक्त भी मथुरिया चौबे जो श्रत्र दूध घी मेवा मिठाई फल फूल खाते हैं वो मांस खाने वाला को पञ्जाइते हैं। अन घास खाने वाले दो बैल जिस गाड़ी को सींच सक्ते हैं उसे मांस भन्नी चार या छः शेर नहीं खोंच सक्ते। पदि मांस खाने वाले अधिक साहसी होते हैं और वीर होते हैं, सो बाघ तिदुंवा भेड़िया मांस खाते हैं, ख्रौर गैंड़ा भैंसा सुवरादि जो घास पात खाते हैं इन्हें देख क्यों दुम दवा कर भाग जाते हैं और कभो सामना भी नहीं करसक्ते। अधिकांश भांड़ भड़्ता रंडी हीजड़ा महिरा ढीमर खटीक कसाई गन्दे मांस मछली ऋडे आदि खाते हैं फिर इनमें क्या साहस और वीरता आजाती है।

मांस में सौ भाग में केवल छत्तीस भाग वह सत रहता है जिससे मनुष्य पुष्ट रहता है शेष चौसठ भाग पानी रहताहै, और अल में बच्चे भाग वह सत रहता है कि जिससे मनुष्य पृष्ट होता है, शेष दश भाग पानी रहता है इसी प्रकार फल फूल पत्ते आ-दिकों का हाल जानो।

बनस्पति और मांस खानेवालों की पहिचान यथाः-

१ बनस्पित और मांस खानेवालों में बड़ी भारी पहिचान यह है कि, बनस्पित खानेवाले रात को स्रोते और आराम में बिताते हैं, और मांसाहारी रात को जाग कर शिकार खेलते वा पशुवों को मार कर खाते हैं इसलिये मनुष्य भांसाहारी नहीं है

२ दूसरी पहिचान यह है कि मनुष्य के शरीर से और बनस्पति खानेवालों के शरीर से पसीना निकलता है, और मांस-भन्नी पशुद्यों के शरीर से पसीना नहीं निकलता इससे मनुष्य बनस्पति खानेवालों में हैं, मांस खानेवालों में नहीं हैं।

३ तीसरी पहिचान यह है कि मनुष्य और बनस्पतिखाने-वाले पशु घूंट से पानी पीते हैं और मांस खानेवाले पशु जीम से चप चप करके पानी पीते हैं, इस बास्ते मनुष्य मांस खानेवालों में नहीं है।

४ चौथी पहिचान यह है कि मनुष्य, और बनस्पति खाने-बाले पशु सरल स्वभाव होकर बहुवा किसीको नहीं सताते और मांस खानेवाले पशु नित्य ही क्रूर स्वभाव के होते हुये दूसरे की मारने का विचार करते रहते हैं, यहां तक कि कभी २ अपने वचीं को भी खाजाते हैं इसवास्ते मतुष्य बनस्पति खानेवालों में हैं, मांस खानेवालों में नहीं है।

4 पांचवीं पहिचान यह है कि आदमी के दांतोंकी बनावट बनस्पित खानेवालों कैसी चवाने को होती है, मांसाहारी शेर कुत्ता के दांतों कैसी नहीं होती, इसिलये मनुष्य बनस्पित खाने-बालों में है।

निर्दयी जीव हत्यारे मांस खानेवाले ही पिशाच म्लेख्ड श्रौर कसाई कहे जाते हैं, पिशाच म्लेच्छ श्रौर कसाइयों के शिर पर कहीं सींग नहीं जगते।

ब्राह्मस्तव निष्फत्त यथाः—

चक्र खांद्धन हीनस्य बिपत्वं निष्फर्लं भवेत् ६। इति पाराशरीय धर्मशास्त्र उत्तरखरह।

अबैद्याव बाह्यमा नीच होता है यथा:-

अवक्रवारी विषस्तु सर्व कर्म सु गर्हितः। अवैष्णवः + समापन्नो नरकं चाधि गरछति २९।

+ राजा प्राचीनवर्हि का वैष्णव धर्मसे ही कल्याण हुआ था

चकादि चिन्ह रहितं पाकृतं कलुवान्तितम्।

श्रवेषणव तु तं दूराच्छ्वाकिमिव संत्येजेत् ३०

श्रवेषणवस्तु यो विषः स्वपाकादधमः स्मृतः।

श्रश्राद्धेयो द्यपाङ्केयो रौरवं नरकं व्रजेत् ३१।

श्रवेषणवस्तु यो विषः सर्व कर्म युतो ऽ पिवा।

स पाखंडेति विज्ञेयः सर्व कर्म सु नाईति ३२।

तस्माचकं विधानेन तन्तं वै धारयेद्विजः।

सर्वाश्रमेषु वसतां स्त्रीणां च श्रुति चोदनात् ३३।

इति वृद्धहारीतस्मृति धर्मशास्त्र आध्याय २

नोट - ब्रह्दब्रह्म संहिता पाद २ श्रध्याय २ ऋोक १०२ से १०५ तक और पाद १ श्रध्याय ५ ऋोक ८ पुनः श्लोक ४४ से ९७ तक देखो।

वथाः-

राजा प्राचीनवर्हिश्च वभूव मख कारकः १।
नारदस्योपदेशेन त्यक्त्वा हिंसा मयं मखम्।
ज्ञानवान वैष्णवो भूत्वा दश पुत्रानजीजनत् २।
इति भविष्य पुराण प्रतिसर्गपर्व श्रध्याय १६।

इन दोनों श्लोकों से यही पाया गया कि मांस खाने वालों के पुत्र नहीं होते, यदि होते ही हैं तो स्नन्तमें सर्वनाश हो जाते हैं। त्राह्मण का तत्त्रण यथाः -- +

क्षमा दया च विज्ञानं सत्यश्चेष दमः शमः । अध्यात्म निरत ज्ञानमेतद्वशस्यण लक्षणम् २७ । इति कूर्म पुराण उत्तरार्द्ध अध्याय १५ ।

नोट — ज्ञान विज्ञान अध्यात्म निरत यही ब्राह्मणका लच्छा है याने ब्रह्म को जानना, और वेद प्रयोजन मात्र ही रह जाता है (गीता २। ४६) भेरों भूत भवानी शिवादि की उपासना करना यह ब्राह्मण का लच्छा नहीं है। वेदान्त को जानने वाला उत्तम ब्राह्मण होता है।

<sup>+</sup> धर्म का लक्ष्ण-देखो मनुस्मृति अध्याय २ श्लोक १२, अध्याय ६ श्लोक ९२। याझवल्क्यस्मृति अध्याय १ श्लोक ६, अध्याय ३ श्लोक ६६। महाभारत शांतिपर्व राजधर्म अध्याय ३६ श्लोक १०, अनुशासनपर्व अध्याय ११४ श्लोक २। नारद परि वाजकोपनिषद उपदेश ३ श्रुति२४। धर्म का मूल-देखो मनुस्मृति अध्याय २ श्लोक ६। याझवल्क्यस्मृति अध्याय १ श्लोक ७। धर्म किसको कहते हैं - देखो वैशेषिकदर्शन अध्याय १ आहिक १ सूत्र २। वशिष्ठधर्मसूत्र अध्याय १ सूत्र ४। वशिष्ठस्मृति अध्याय १ श्लोक ३।

तथा-

वोगस्तपो दमो दानं सत्यं शौचं दया श्रुतम् । विद्याविज्ञानमास्तिक्यमेतद्भवाह्मण लक्षणम् २१। इति वशिष्ठ स्मृति अध्याय ६।

त्राह्मण राज्द का अर्थ यथाः—
कर्मणा वाघं सद्वुध्या करोति त्रह्मभावनाम् ।
स्वधर्म निरतः सुद्धस्तस्मादृत्राह्मण उच्यते ७० ।
इति ब्रह्मवैवर्त पुराण गणपतिखंड अध्याय ३०!

नोट — ब्रह्म की उपासना करना ही ब्राह्मण का अर्थ होता है। ब्राह्मणों के ही दोष से प्रजा को पीड़ा होती है। क्था: —

विषाणां कर्म दोषैस्तैः प्रजानां जायते भयम्। हिंसा मनस्तथेर्ध्य च क्रोधो ऽस्या ऽक्षमा ऽधृति ३६। इति मत्स्यपुराण अध्याय १४४

तथा--

दुरिष्टेर्द्धी तैश्च दुष्कृतैश्च दुरागमे:। विप्राणां कर्म दोषेस्तै: प्रजानां जायते भयम् ३६। इति ब्रह्माण्डपुराण पूर्वभाग अनुष गपाद अध्याय ३१। बाह्यगों का धन तपस्या है यथाः—

तयो धनं ब्राह्मणानां ७४। इति ब्रह्मवैवर्तपुराण गण्पतिखंड ऋष्याय ३४।

ब्राह्मण के धारण करने योग्य यथा:-

दानं व्रतं व्रह्मचर्यं यथोक्तं व्रह्म धारणम् । ×दमः मशांतता चैव भृतानां चानुकंपनम् १५ । इति महाभारत आश्वमेधिकपर्व अध्याय १८। अधर्मी ब्राह्मण् का लक्षण यथाः—

अधर्माचरणो विषा हिंसा चाशुभ लक्षणम् ५। इति कूर्मपुराण पूर्वार्द्ध अध्याय ८।

× ब्रह्मवैवर्तपुराण प्रकृतिखंड द्यान्याय ३० रलोक २११ से २१४ तक में लिखा है कि नारायणचेत्र (तीर्थ), कुक्दोत्र, विष्णु-कांची, काशी, बदरीनारायण,गङ्गासागर, पुष्कर, भास्कर,प्रभास, रासमण्डल, हरिद्वार,केदार, स्रोम, बदर, सरस्वतीनदीके किनारे, वृन्दाबन के बन में, गोदावरी नदी के किनारे, कौशिकी नदी के किनारे, त्रिवेनी (प्रयाग) में, हिमालय में, श्रीर भी संसार भर में बिवने तीर्थ हैं, कोई भी तीर्थमें जो मनुष्य दान लेगा तो वह दान लेगेवाला कुंभी पक नरक में पड़ेगा। ९० पृष्ठ की टिष्पणी में ३५ रलोक देखे।

नोट - उक्त श्लोक से हिंसा करता ही अधर्मी ब्राह्मण का लक्षण है। तो ब्राह्मण हिंसा क्यों करते हैं। बैलों को बिधया करना कराना और उनको नाथना यह भी बड़ी हिंसा है - जो बैलों को बिधया करते और नाथते हैं वे लोग महानिर्द्यी और पापिष्ठात्मा होते हैं यथाः -

येचिँ इति दृष्णान् येच भिंदन्ति नास्तकान् । वहंति भहतो भारान् वध्नन्ति दृष्यन्ति च ३७ । हत्वा संत्वानि खादन्ति तान् कथं न विग्हेसे ३८ । इति महाभारत शांति पर्व मोच्चमे अध्याय ५९ ।

वंधकारच पश्चनां येते वै निरय गामिनः ७९ ।
तद्दीका नीलकंठी-पश्चनां युगेन गोएया अएड मर्दनैन वा बल वीर्य योनीशिका अन्नाप्तदग्रकाः ७९ ।
इति महाभारत अनुशासन पर्व अध्याय २३ । पृष्ठ ४९ रलोक
३३-३४, पृष्ठ ५९ रलोक ३३ से ३५ तक भी देखे।

धर्म का साधन यथाः-

त्र्रहिंसा सत्यमस्तेयं शौचिमिन्द्रिय निग्रहः । दानं दया दमः क्षान्ति सर्वेषां धर्म साधनम् १२२ इति याज्ञवल्क्यस्मृति अध्याय १। तथा-

श्रथाहिंसा दमा सत्यं हीः अद्धेंद्रिय सयमः। दानिष्टं तपोध्यानं दशकं धर्म साधनम् ३४। इति भविष्यपुराण ब्राह्मपर्वे श्रध्याय १८९।

तथा च-

परित्यजेदर्थकामौ यौ स्वातां धर्मवर्जितौ। धर्मचाष्यसुखोदर्कं लोकविक्रुष्टमेव च १७६। १७८ रलांक भी देखो।

इति मनुस्मृति अध्याय ४।

सन्भतनधर्म का मूल यथाः—

अद्रोहश्चाप्यलोभाश्च तपो भूत दया दमः ३७। त्रह्मचर्य तथा सत्यमनुक्रोशः क्षमा घृतिः। सनातनस्य धर्मस्य मूलमेतदुरासदम् ३८। इति त्रह्माण्डपुराण पूर्वभाग अनुषंगपाद अध्याय ३०

सनातनधर्म यथाः—

अवध्यः सर्वे भूतानामहमेकः सनातनः १८। इति महाभारत आश्वमेधिकपर्वे अध्याय १३।

नोट - इसी पर्व के अध्याय १८ में श्लोक १५ से २० तक में देखो बाह्मण का सनातनधर्म। स्वराज्य पाने योग्य मनुष्य यथाः—
 सर्वभूतेषु चात्मानं सर्वभूतानि चात्मिनि ।
 समं पश्यकात्मयाजी स्वराज्यमधिगच्छति ९१।
 इति मनुस्मृति श्रम्याय १२।

चौदह भुवन एक पित होई, भृत द्रोह तिष्ठई नहिं सोई ३८। इति रामचितिनानस सुन्दरकांड।

मनुष्य के कल्याण के बड़े भारी साधक यथाः— वेदाभ्यासतपो ज्ञानमिन्द्रियाणां च संयमः । श्रद्धिसा गुरुसेवा च निःश्रेयस करं परम् ८३।

इति मनुस्मृति अध्याय १२।

नोट-ब्राह्मण के कल्याण करनेवाले, श्लोक १०४ देखों। और श्लोक ९२। ९३ भी देखो।

प्रतोक के देनेवाले यथाः—

श्रिता सत्यमस्तेयं शौचिमिन्द्रिय संयमः।
दानं द्या च क्षांतिश्र ब्रह्मचर्यममानिता २।

<sup>•</sup> सुखी प्रजा जनु पाय सुराजा २३५ । । जनु सुराज मंगल चहुँ थोरा २३६ । मानस् अयोध्या

शुभा सत्या च मधुरा बांङ नित्यंसिक्कियारितः । सदाचार निषेतित्वं परलोक प्रदायकाः ३ । इति वामनपुराण श्रव्याय १५।

न दया के समान दूसरा पुण्य है और न हिंसा के समान दूसरा पाप है यथाः—

द्या समं नास्ति पुरायं पापं हिंसा समं नहिं ३९ । इति देवीभागवत स्कंघ ७ अध्याय १६।

देया के बराबर संसार में दूसरा धर्म नहीं है यथाः—

न धर्मस्तु दया तुरुषो १८।

इति नारदीय पुरास उत्तरखरेड श्रभ्याय २२।

तारने योग्य ब्राह्मण यथाः— ये शान्तदान्ताः श्रुति पूर्ण कर्णाः, जितेन्द्रियाः प्राणि वधानिष्टताः । प्रतिम्रहे सङ्कुचिता ग्रहस्तास्,

ते ब्राह्मणास्तारियतुं समर्थाः २२ । इति वशिष्ठ स्मृति अध्याय ६।

नोट-"धर्म की इच्छा वाले द्विज शिखा छोड़ अपने शरीरके

सब बालों का मुंडन करावें क्योंकि जो कुछ पाप किया जाता है वह सब बालों में टिकता है। (यर्त्किचित्कियते पापं सर्वें केशेषु तिष्ठति ५५। इति पाराशरस्मृति श्राध्याय ९)।"

चांडाल त्राह्मण यथाः-

निर्दयः सर्व भूतेषु विप्रश्वाषडाता उच्यते ३८० । इति श्रतिसमृति ।

नोट—''इसी अत्रिस्मृति के ३०० रलोक में लिखा है कि जो ब्राह्मण सदा मछली मांस खाता है उसको निषाद कहते हैं। और निपाद को रवपच और चांडाल कहते हैं, देखो अमरकोष तृतीय कांड शुद्रवर्ग रलोक १९-२०।"

त्राह्ययका देवलका नासत्रा ग्रामयाजकाः।
एते त्राह्मण चाएडाला महापथिक पंचमाः ६।

इति महाभारत शान्तिपर्व राजधर्म अध्याय ७६।

अर्थ-धर्माधिकारी, मासिक लेकर देवता की पूजा करने वाला, ज्योतिषी, प्रामयाजक अर्थात् मनुष्यों को यज्ञ कराने वाला, और महापथिक अर्थात् समुद्र की राह नौका से जाना वा मार्ग का कर लेनेवाला, यह पांचों लक्षण चा्एडाल कहाते हैं ६। पृष्ठ ५४ में नोट का ११२ खोक देखे। श्रीर ११७ पृष्ठ में १० रक्तोक देखे।

प्रश्न—''बुँ देलखंड के चमार मरे पशु को खाते हैं और मिथिला के बाह्यण जीने पशु को खाते हैं, दोनों में कौन श्रेष्ठ है।"

ब्रह्मतत्वं न जानाति ब्रह्मसूत्रेण गर्वितः। तेनैय स च पापेन विमः पशु उदाहृतः ३०९। इति अत्रिस्मृति।

मांस खाने वाले को द्या नहीं होती यथाः—

नो दया मांस भोजिनः ५। ×

इति चाण्यम्य नीति अध्याय ११।

मांस! लकड़ी पत्थर घासादि से पैदा नहीं होता, किंतु किसी जीव की देह काटने से मांस निकलता है। इसी से इसके खाने में पाप लगता है, तुम अपनी देह काट के जान सक्ते हो कि

प्रवादान परोनित्यं जीवमेव प्ररक्तयेत्
 चाएडालो ऽ प्यथ श्रुद्रो वा स वै ब्राह्मण उच्च्यते ४३।
 इति पद्मपुराण भूमिखण्ड व्यथ्याय ३७।

जानवरोंकी देह काटनेसे उन्हें कुछ दुख@ होताहै या नहीं—इसी वास्ते मांस खाना मना किया है। यदि मांस खाने वाला न होगा तो मारने वाला भी न होगा, क्यों कि मांस खाने वाले को ही मारनेवाला जानवर मारता है यथाः—

अहत्वा च कुतो मांसमेवमेतिहिरुद्धध्यते २।
निर्हि मांस तृणात् काष्टादुपलाद्वापि जायते।
हत्वा जतुं ततो मांसं तस्पदोषस्तु भक्षणे २६।
यदि चेत्खादको न स्यान्न तदा घातको भवेत्।

तथैवात्मा परस्तद्वद्द्रष्टयः सुखमिच्छता।
 सुख दुःखानि तुल्यानि यथात्मनि तथा परे २१।
 सुखं वा यदि वा दुःखं यत्किचित्कियते परे।
 यत्कृतं तु पुनः पश्चात्सर्वमात्मनि तद्भवेत् २२।
 इति दच्चस्मृति अध्याय ३।
 द्या समंनास्ति पुण्यं पापं हिंसा समंनहिं ३९।
 इति देवी भागवत स्कंघ ७ अध्याय १६।
 द्या का स्वरूप—देखो अत्रिस्मृति श्लोक ४१। शांडिल्योपनिषत् अध्याय १ श्रुति १। श्रीजावालदर्शनोपनिषत् खण्ड १
श्रुति १५।

षातकः खादकार्थाय तद्वधातयित वे नराः ३१ ।ऽ इति महाभारत अनुशासन पर्व अध्याय ११५ ।

S वैष्णुवों को भी ध्यान देना चाहिये कि मृगछाला, बाधम्बर, चवर, शंक. श्ररघा, नौबतमढ़ाना, मंधु, गोरोचन, कस्तूरी, इत्यादि ये हिंसा कराने वाली और मल वस्तुयें हैं-इन को त्याग दें। यह सब तामसी लोगों के योग्य हैं यह बस्तुयें न मोच प्रद हैं न स्वर्ग प्रद हैं किन्तु जीवों का बदला देने को नरक में जरूर जाना पड़ैगा। श्रीर चौरासी लाख योनियों में नम्बर बार घृषना पड़ेगा। तुम्हारे ही वास्ते दुष्ट लोग सृगादि पशुष्टीं की हिंसा करते हैं। तुन्हारे ही वास्ते हिंसक ! सुरहगौवों की पृष्ठें काटते हैं जिनका चवर बनता है जो सूखा मांस ठाकुर के सिर पर हलाते हो ख्रीर वहीं पर भोजन की बस्तुयें रहती हैं किन्तु दाल भात का थार वहीं रखा जाता है। शङ्क खरघा ये हड्डी ही है जो उसी हाथ से भोजन की वस्तुर्ये उसी हाथ से अर्था पकड़ता। मुदें को फेंक के हड़ी के अर्घे के जल से पवित्र होना आश्चर्य है क्या आपवित्र से आपवित्र पवित्र हो सक्ता है ? म्रधु के साथ मांस खाने में द्याता ही है सो ठाकुर पूजा में काम लाते हैं, मधु खानेवाले मक्खियों का मांस, खाते ही हैं, श्रीर फिर मल खाना कोई श्रच्छी बात है। क्योंकि १४ मलों से जीवों के शरीर बने हैं—ये सब दुर्गनिध वाले श्रागुद्ध मल कहाते हैं। मैत्रायण्युपनिषद् प्रपाठक १ श्रुति २ में लिखाहै कि है भगवन्! हड्डी १ चर्म २ नस ३ चर्बी ४ मांस ५ बीर्य ६ लोहू ७ कफरोग ८ झांसू ९ विच्ठा १० मूत्र ११ बात १२ पित्त १३ कफ १४ ऐसे दुर्गनिधत श्रसार शरीर में मनुष्य कैसे काम भोग की इच्छा करता है। एष्ठ १७८ भी देखो।

इस से मांस खाने में महारोप ( महापाप ) है क्यों कि यह

शुक्राच तात संभूतिमासस्य ह न संशयः।
भक्षणे तु महान् दोषो निवृत्त्या पुरुषमुख्यते १३।
इति महाभारत अनुशासनपर्व अध्याय ११६।

इसी प्रकार सब की जानों, मधु के विषय में पृष्ठ ३० पेकि १४, पृष्ठ ६९ पंक्ति ६ से आगे देखा। उक्त बस्तुयें उसी बेंद शास्त्र में लिखी हैं कि जिस बेंद शास्त्र में पशु आदिकों का काटना और मांस खाना लिखा है, और बेंद तामसी आदि तीनों गुणों से भरा ही है (गीता २। ४५) इससे तुमको सात्विक गुण गृहण करना ही लाभ प्रद है। यह मनुष्य लाक केला के खम्भ के समान भीतर पोला है, जो इसमें स्थिरता का खोज करते हैं वे मूर्ख हैं, क्योंकि यह तो पानी के बलवृते खरीखा है।

> मनुष्ये कदलीस्तर्भिनिःसारे सारमार्गणम् । करोति यः स सम्मूढो जलबुद्वबुदसिन्नभे ८। इति याज्ञवल्क्यस्मृति श्रध्याय ३।

ब्राह्मण की ५ गति। यथा:--

बाह्मणः कर्म सन्यासा है राज्यात्प्रकृतेर्त्वयम् । ज्ञानात्प्राञ्चोति कैवल्यं पश्चैता गतयः स्पृताः ३४ । इति मत्स्यापुराण अन्याय १४३ ।

नोट—"इन ५ गतियों से अतिरिक्त ब्राह्मण नरक को जाता है। शिखा यद्योपवीतादि ब्रह्मकर्म यतिस्त्यजेत् । स जीवन्नैव चा-एडालो मृतः श्वानो ऽ भिजायते ४७ इति बृद्धहारीतस्मृति, अध्याय = । चरेन्मधुकरीं वृत्तिमिष म्लेच्छ कुलाद्षि । एकान्नं नैवभोग्-तब्यं बृहस्पति समोयदि १९५९ इति अत्रिस्मृति ।"

मनुष्य' जब तक अपने दुखं नहीं पाता तब तक दूसरे ' के दुख का निश्चय नहीं करता यथाः— यावन्न लाभते दुःखमात्मनो मानवं कचित् । तावन्यस्य दुःखेन प्रतीति नाधि गच्छति ३२। ंइति आदि पुराण अध्याय २६।

इस संसार में चार प्रकार,के मनुष्य होते हैं—

१ अपने स्वार्थ को छोड़ परमार्थ करते हैं. वे शतपुरुष हैं। २ अपने स्वार्थ को लेके परमार्थ करते हैं. वे सामान्य हैं। ३ अपने स्वार्थ के वास्ते दूसरे का अर्थ नाश कर देना, वे राज्ञस हैं।

ध अपना भी स्वार्थ नहीं होता और निरर्थक दूसरे के हिताकों भी नाश कर देते हैं; हम नहीं जानते कि वे कौनहैं यथाः—

एके सत्पुरुषाः परार्थघटकाः स्वार्थान्परित्यज्य ये। सामान्यास्तु परार्थग्रुद्यमभृतः स्वार्था ऽ विरोधेन ये। ते ऽभि मानव राक्षसाः परिहितं स्वार्थाय निघ्नन्ति ये। ये निघ्नंति निर्थके परिहितं ते के न जानीपहे ७४।

इति भर्तु नीति शतक।

मांस खाने वालेको जो दान देता है वह महापापी होता है यथाः-वृथा पांसं च यो भुङ्क्ते स्वाय पाकाक्षमेव अ च।

<sup>😮 &#</sup>x27;पकान' ऐसा पाठ उत्तम है।

तहत्तं 🏖 महापापी × वामुयाचन्द्रपातकम् ९२ । इति ब्रह्मवैवर्तपुराण शकृतिखम्ब श्रध्याय ५८ ।

नोट — जब कि मांस खाने वाले को दान देने वाला महापापी है तो मांस खाने वाला उससे बड़ा महापापी होना चाहिये।
हिंसकों का प्रायक्षित वेदों ने नहीं कहा यथाः —
प्रायश्चितं हिंसकानां न वेदेषु निरूपितम् ८२ ।
इति ब्रह्मवैवर्त पुराण गणेशस्वरह अध्याय ३५।

तथा-

प्रायश्चित्ते हिंसकानां न वेदेषु निरूपितम् । वुधे समुचिते तेषामित्याः कमलोद्भव । इति शब्दकल्पद्रुम ब्राह्मणशब्दान्तरगतः।

हिंसक ब्राह्मण के मारने में कुछ दोष नहीं है और न उसके बारने में ब्रह्महत्या लगतो है। शर्त यह है कि हिंसक ब्राह्मण, ब्राह्मण हो ही नहीं सक्ता चाहे वह विधि से या वे विधिसे किसी प्रकार हिंसा करें यथा:—

श्वे 'तहानो महापापी, ऐसा पाठ उत्तम है। × १४ पृष्ठ का
 ३४ स्रोक भी देखी।

श्रात्मानं हन्तु मायान्तमि वेदान्त पारगम् । न दोषो हनने तस्य न तेन ब्रह्म हा भवेत् । इति शब्दकल्पद्रुम ब्राह्मण शब्दान्तरगत ।

एक के मारने में अनेकों को सुख हो तो उसके मारने में पुरव है

तत्रेकस्मिन्वधं नीते चहुनां तु सुखं भवेत्। तस्य हिंसा कृतं नृनं वहु पुराय प्रदा भवेत् ७९। इति देवीभागवत स्कंघ ७ अध्याय २५।

नोट-२२ पृष्ठ का २६ ऋोक भी देखो । मनु ८ । २८६-२८७-२९७ । हिंसते ति हिंसाया दोषाभावो यथाः-

. S कुएडिलिया — लङ्का के अति नीच वे निश्चर किलयुग बीच। दरभङ्गा सैथिल\* भये करें कर्म अति नीच।

जो मैथिल मांसादि श्रमच्य मच्चण करते हैं उन्हीं को निश्चर समामा जाय। न कि श्राचारी वैष्णव (ब्रह्म के जानने बाले) जीवों पर दया करने वाले सज्जन मैथिल।

कृते पित कृतं कुर्यात् हिंसते पित हिंसितम् । न तत्र दोषं पश्यामि दुष्टे दोषं समाचरेत् । इति शब्दकल्पद्रुम हिंसा शब्दान्तरगत गारुडे ११५ । ४७ ।

> करें कर्म अति नीच मीन को जीती खाते। फड़फड़ात अति दीन दुष्टतन द्या न साते। दाँतन खींचें खाल खाँच खस्सी को बंका। यह भारत के बीच भयो दरभङ्गा लङ्का २१। वकरी वद्या से कहै सुनहु लाल मम बात। तुमरे वैरी इत बहुत करिहें कबहूँ घात। करिहें कबहूँ घात वसें हम मैथिल टोली। न जानें कब खायँ मार के आँतें खोली। तुम्हें पियावत दूध खायेँ हम पाता पकरी। कैसे तुम्हें बचायें एक अबला हम बकरी ५१। बचा बकरी से कहै माइ पिलाबो दुध। हमें लुटारो गोद में सोवें आँखें मूँद। सोवैं आँखें मूँद गोद तुमरी डर नाहीं। माता तुमरे रहित हमें नहिं कोई खाहीं।

नोट—"% पृष्ठ के १२ मन्त्र से भी यही बात निकलतीं है कि-मांस खाने वालों को मारने में कोई दोष नहीं है, क्यों कि ऐसे लोगों के मारने से अनेक जीव मरने से बचते हैं। जब कि मछली खस्सी के मारने खाने में दोष नहीं है तो मछली खस्सी के मारने खाने वाले के मारने में भी दोष नहीं है, क्योंकि आत्मा सब की बराबर, है। और आँख से देखने में भी आता है।"

मांस शब्द का यह अर्थ होता है कि इस लोक में मैंने जिसको खाया है वह मुक्ते परलोक में खायगा यथाः—

> मां स अक्षयितोमुत्र तस्य मांस मिहाबचहम्। एतन्मांसस्य मांस त्वं प्रवृन्ति मनीषिणः ५५। इति मनुस्मृति अध्याय ५।

सोट— महाभारत आनुशासनपर्व अध्याय ११६ श्लोक ३४ से ३७ तक देखो ।

किल्युग में ब्राह्मण मछली मांस खायँगे और पापी होंगे यथा:—

रोकर माता कहै प्रेम जिसका नहिं कचा। जब मारहिंगे नीच तुन्हें का करिहों बचा ५२। इति वाममैथिलपरिचय से उद्धृत। मत्स्यामिषेण† जीवन्ति दुइंतश्चाप्य जीविकाम् । घोरं कित्तयुगे विष्य सर्वे पाप रता जनाः ४० । इति नारदीयपुराण पूर्वस्वण्ड अध्याय ४१ ।

पर स्त्री हिंसकाश्चेव गोत्र विक्रयिणो डिजाः २५। इति पद्मपुराण क्रियायोगसारखण्ड अध्याय २६।

किलयुग में ब्रह्मवादी सुरापी होंगे यथाः -

सुराषा ब्रह्मवादिनः ३४।

इति ब्रह्मपुराण अध्याय १२३ ।

किन्नयुग में ब्राह्मण रूप में राज्ञस होंगे ख्रौर मांस खायँगे भक्याभक्त्यी होंगे भूठ व्रत करने वाले पाखण्डी होंगे ख्रौर राजा कर्णवेदी + होंगे यथाः—

विष रूपेण रक्षांसि राजानः कर्णवेदिनः । क्रव्यादा ब्रह्मरूपेण सर्व भक्ष्या दृया ब्रताः ५६ । इति ब्रह्मपुराण ऋष्याय १२३ ।

† दोहा—सहवासी काची तिलें पुरजन पाक प्रवीन।
काल चें प कैसे करें तुलसी खग मृग मीन १।

ं कान की सुनी बात मानना।

पासंडिनो द्विज जना द्वपलानृदेवा: ३८ । इति भागवत स्कंघ २ ऋध्याय ७ ।

श्रर्थ-कित में ब्राह्मण पालरखी श्रीर राजा शृह होंगे ३८ । अध्य सब लोग श्रपने भोजन में मछली ही खांयगे श्रीर श्रमस्याहारके दोष से एक वर्ण हो जांयगे यथाः—

श्रभक्ष्याहार दोषेण एकवर्णागताः प्रजाः।
तेऽपि मत्स्यान् हरन्तीह श्राहारार्थश्र सर्वशः ७७ 💥 इति मत्स्यपुराण श्रध्याय १४४।

श्रु अन्तः शाक्ता वहिशैंवः सभामद्धेच वैष्णवः।
 नाना रूप घराः कौला विचरंति महीतले।
 अ व्राह्मण यदि मछली खाले तो ३ दिन उपवास करके शुद्ध
होता है यथाः—

ह यथाः—

मत्त्यांश्च कामतो जग्ध्या सोपवासस् ज्यहं वसेत् १७५।

इति याज्ञवल्क्य स्मृति श्रध्याय १।

मत्स्यांश्च कामतो मुक्त्वा सोपवासस्ज्यहं वसेत्।

शायश्चित्तं ततः कृत्वा शुद्धिमाप्नोति वाडवाः २८।

इति अञ्चववतिपुराण अञ्चखण्ड श्रध्याय २०।

ई७ पृष्ठ की ६ पंक्ति से ८ पंक्ति तंक भी देखो।

कित्युग में सब मनुष्य चोर हिंसक भूठा कपटी होंगे श्रौर बिना तुलसी के पूजा करेंगे वाममार्गी होंगे श्रौर बाम मंत्रों की उपासना करेंगे यथा:—

वामाचार रताः सर्वे मिथ्या कापत्य संयुताः।
तुलसी वर्जिता पूजा भविष्यति ततः परम् १६।
चौराश्च हिंसकाः + सर्वे भविष्यति ततः परम् १८।
इति बहावैवर्तपुराण प्रकृतिखंड अध्याय ७।

बाममंत्रोपासकश्च चतुर्वर्णाश्च तत्पराः २३। इति ब्रह्मवैवर्ते पुराण श्रीकृष्णजन्मखण्ड व्यध्याय १२८।

तिज अति पंथ वामपथ चलही ।
वंचक विरचि वेषु जग छलही १६८ ।
इति मानस रामायण अयोध्याकांड ।
कलियुग में चारों वर्ण एक वर्ण होजायँगे वथाः—
एकवर्णा भविष्यन्ति विषयार्थ कलौ जनाः ३६ ।
एकवर्णा भविष्यन्ति वर्णाश्चत्वार एव च ३८ ।
इति पद्मपुराण क्रियायोगसारखंड अध्याय २६ ।

<sup>+</sup> पर हिंसा परायणाः १०। इति अध्यात्मशामायण बाल-कांड सर्ग १।

कितयुग में शृद्ध ! ब्राह्मण का श्राचार करेंगे श्रौर ब्राह्मण ! शुद्र का श्राचार करेंगे यथा:—

शूद्रस्य वाह्मणाचाराः शूद्राचाराश्च व्राह्मणाः ४२ । इति व्रह्मारहपुराण पूर्वभाग अनुषंगपाद अध्याय ३१।

कित्युग ने सब धर्मी का नाश कर दिया इसके प्रभाव से मनुष्य पाप में रत होगये और पाप करके लोग दुखी होगये सब पाखरडी होगये वर्णशंकर होगये यथाः—

सो किलकाल किटन उरगारी,
पाप परायन सब नर नारी।
किलिमल ग्रसे धर्म सब ग्रुप्त भये सद्ग्रंथ।
दंभिन निज मित किलिप किर मगट किये बहु पंथ।
भये लोग सब मोह वस लोभ ग्रसे सुभ कर्म ९७।
भये वरनसंकर सकल भिक्त सेतु सब लोग।
करिह पाप पावहिं दुल भय रुज सोक वियोग १००।
सुन खगेस किला कपट हठ दंभ द्वेष पाखंड।
मान मोह मारादि मद ब्यापि रहे ब्रह्मंड।
तामस धर्म करिह सब जप तप मल बत दान।
देव न बरपिह धरिन पर बये न जामिह धान १०१।

## बरनाश्रम धर्म विचार गये १०२। इति मानसरामायण उत्तरकांड।

कलियुग प्रभाव से हिन्दू शब्द का अर्थ ही नष्ट होगया। हिन्दू शब्द का यही अर्थ होता है कि जिसमें कोई दूषण न हो स्थाः—

> हीनं दूषयतीति हिन्दुः । इति शब्दकल्पद्रुम हिंदू शब्दान्तरगत ।

हीनश्च द्वयत्येव हिंदुरित्युच्यते त्रिये। इति शब्दकल्पडुम हिंदू शब्दान्तरगत मेरुतन्त्र प्रकाश ३३ का बचन ।

धर्म हानि होने से नरक होता है यथाः—

थर्म हानिर्नराणां हि नरकाय भवेत्पुनः ४३।×

इति देवीभागवत स्कंघ २ अध्याय १२।

× वर्णाश्रम विरुद्धं च कर्म कुर्वैति ये नराः। कर्मणो मनसा बाचा निरयेतु पतंति ते २४। इति शिवपुराण उमासंहिता श्र-श्याय १६। जब मनुष्य धर्मकी रक्षा करता है तब धर्म उसकी रक्षाकरता है यथा—धर्म एव हतो हंति धर्मोरकृति रिह्नतः। स्ववर्ण धर्म का पालन करने से ही सब प्रकार सिद्धिलाम करते हैं, और विरुद्ध आचरण करने से ही नरक जाते हैं यथाः— स्ववर्णधर्मात् संसिद्धि नरः प्राप्नोति न च्युत । प्रयाति नरकं प्रत्य प्रति सिद्धि निशेवणात् ९ । इति मार्कक्षेय पुराण अध्याय २५।

नोट—चारों वर्ण भगवत ने रचे गीता ४। १३।

कित्तियुग में मनुष्यों का नाश जल्दी क्यों हो जाता है यथाः— श्रन्य प्रज्ञा तथा लिंगा दुष्टान्तः कर्णाः कर्लो । स्तर्नतो विनश्यंति कालेनाल्पेन मानवाः ४३ ।

इति ब्रह्मपुराग् अध्याय १२२ ।

नोट--कूर्मपुराण उत्तरार्छ अध्याय १६ ऋोक २१-२२ भी देखो।

बंगाली ब्राह्मण, मैथिल ब्राह्मण और कान्यकुञ्ज ब्राह्मण ही विशेष कर देवी. श्राद्ध और अनेकानेक यज्ञों में बराबर पर्छ, बिल देते हैं और सामान्यता भी मांस मझली खाने में बीर हैं।

यदि इनको मुदी का खानेवाला पिशाच गीध वा जंबुक

तस्माद्धर्मो न हन्तव्यो मानो धर्मो इतो ऽ वधीत् १५ इति मनुस्मृति अध्याय ८। कहा जाय तो इसमें क्या बाधा है। शास्त्रानुसार तो बिलकुल ही ठीक है और प्रत्यन्न में भी देखा जाता है। इनके घर को श्मशान पैट को कबुर और मुख को मल मुर्श आदि के फैंकने के मकान का दरवाजा भी कह सक्ते हैं

बंगालियों के विषय में यथा:-

स्थाने सिंह समा रखे मृगसमाः स्थानान्तरं जंबुकाः। श्राहारे वक काक शूकर समाश्रद्धागोपमा मैथुने। रूपे मरकटवत् पिशाचवदना क्रूराः सदा निर्देशा। वंगीया न यदि मानवा हर हर प्रेताः पुनः की हशाः।

श्रथ—अपने स्थान में सिंह की भांति स्थिति करनेवाले, रण में मृग की तरह भागनेवाले, दूसरे के स्थान में जंबुक के ऐसे दब के रहनेवाले, बगला काक और सुवर की तरह अभद्य खाने वाले, विषय (स्त्री) के सेवन में खस्सी (बकरा) ऐसे, बन्दर की सहश रूप वाले, पिशाच ऐसे सुखवाले, कूर स्वभाववाले, बिल-कुल दया से रहित, यदि ऐसे मांस भद्दी कुत्सित ब्यवहार करने

<sup>+</sup> सिंधु सौबीर सौराष्ट्रं तथा प्रत्यन्त वासिनः। कलिङ्ग कौङ्कणान्बङ्गान्गत्वा संस्कारमहीत १६ इति देवल स्मृति। धर्थ-धिंबु, सौबीर, श्रौर सौराष्ट्रदेश के तथा इनके निकट के

वाले वंगाली लोग मनुष्य कहे जावें तो फिर प्रेतों में किसकी गणना होगी, अर्थात् यही वंगाली ! मनुष्य रूपसे प्रेतगण हैं। मैथिलों के विषय में यथाः—

श्रवतार त्रयं विष्णोर्मैथिलैं: कवली कृतम्। इति संचिन्त्य भगवान नारसिँहं वपुर्वधौ।

निवासी कितङ्क (उड़ीसा), कौङ्कण (कोङ्कण) और बंगाल में जाने पर पुनः संस्कार के योग्य होते हैं १६। अवन्तयो ऽ ङ्गमग्याः सुराष्ट्रो दिल्गा पथाः। उपावृत्सिन्धु सौबीरा एते सङ्कीर्ण योनयः ३१। आरट्टान्कारस्करान्पुरण्ड्रान्सौवीरान्वङ्गकितङ्कान्प्रान् नानिति च गत्वापुनस्तोमेन यजेत सर्वपृष्ट्रथा वा ३२। अथाप्युदान्हरन्ति ३३। पद्भ्यां स कुरुते पापं यः कितङ्कान् प्रपद्यते। अष्टपयो निष्कृति तस्य प्राहुवेरवानरं हिवः ३४ इति बौधायनस्यृति प्रश्न १ अध्याय १। अर्थ — अवन्त, अङ्क, मगध, सौराष्ट्र, दिल्णापथ, उपावृत्, सिन्धु और सौबीरदेश, यह सब संकीर्ण योनि हें ३१। आरट्ट, कारस्कर, पुरण्ड्र सौबीर, वङ्ग (बङ्गाल), किलग (उड़ीसा), और प्रान्तान देश में जानेवालों को अपनी शुद्धि के लिये पुनस्तो मेन अथवा सर्वपृष्ठया मंत्र से यज्ञ करना चाहिये ३२। जैसा कि उदाहरण देते हें ३३। कितङ्ग अर्थात् उड़ीसा देश में जानेवाला दानों पावों से पाप करता है, महर्षियों ने उसकी शुद्धि के लिये वैरवानरेष्टो यज्ञ कड़ा है ३४।

अर्थ — विष्णु भगवान पहिले मत्स्य कच्छ और बाराह रूप से पृथ्वी में प्रगट हुए, किन्तु उनको मैथिलों ने खाडाला-तब तो भगवान ने क्रोध करके नारसिंह शरीर को धारण किया, यदि मैथिल उसको खाते तो स्वयं ही भन्नित होजाते।

"पंडित श्रवरज इक वड़ होई, इक मर भुए शक्न नहिं खाई इक मर सीम रसोई १ किर स्नान तिलक किर बैठे नौगुष्म कांध्र जनेऊ हांड़ी हाड़ हाड़ थारी मुख श्रव षट कर्म बनेऊ २ धरम कथे जह जीव वधे तह अकरम कर मेरे भाई जो तोहरे को श्राह्मण कहिये तो केहि कहिये कसाई ३ कहें कबीर सुनो हो संतो भरम भूलि दुनियाई श्रपरमपार पार पुरुषोत्तम यह गति बिरले पाई ४ शब्द ४६ इति कबीर बीजक। षट्कर्म—हांड़ी में हाड़ १ श्रारी में हाड़ २ हाथ में हाड़ ३ मुख में हाड़ ४ पेट में हाड़ ५ गुदासे हाड़ ६। बनाबे १ बनवावे २ परोसे ३ परोसवावे ४ खावे ५ खवावे ६ श्रध्यापनमध्ययनं यजनं याजनं तथा। दानं प्रतिश्रहरूचेव षट्कर मांप्यप्रजन्मनः ७५ इति मनुस्मृति श्रध्याय १०। कुर्मपुराणपूर्वा खश्रध्याय २ रलोक ३९ भी देखो।" कान्यकुठजों के विषय में यथाः—

कान्यकुब्जा द्विजाः सर्वे सूर्या एव न संशयः। मीन मेषादि राशीनां भोक्तारः कथमन्यथा। श्राराय यह है कि जैसे सूर्य मीन मेनादि बारह राशियां को भोगते हैं तैसे ही कान्यकुब्ज बाह्यण मीन मेनादि जानवरों को खाजाते हैं।

शिकार खेलने वालोंकी दुर्दशा-अर्थात् जिस प्रकार शिकारी, जानवरों को मारते हैं, वह भी दसी प्रकार नरकों में यसदूतों से मारे जाते हैं यथा-

ये त्विहत्रै श्वगर्भपतयो ब्राह्मणाद्यो मृगय।विहारा श्रुतीर्थे च मृगान् निघ्नन्ति तानपि समेवाँ स्लक्ष्य भूतान् यम-पुरुषाइषाभिविध्यन्ति २३ । ३१ सं ३३ श्लोक तक देखो। इति भागवत स्कन्ध ५ श्रुष्याय २६ ।

नोट-"शिकार खेलने के विषय में मनुस्मृति अध्याय ७ श्लोक ५०,अध्याय ५ श्लोक ५२ और यजुर्वेद अध्याय १३ मन्त्र ४७-४८ देखो । जो मनुष्य बल से पराये के राज्य (शरीर से बड़ा कुछ नहीं है) को जीत लेता है वह शूर नहीं होता, किन्तु जिसने इन्द्रियों के प्राम को जीता है बुद्धिमान लोग उसी को शूर कहते हैं। देखो दच्चस्पृति अध्याय ७ श्लोक १९ और व्यासस्मृति अध्याय ५ श्लोक ५८ से ६० तक ।"

बिल शब्द का अर्थ-मेंट और पूजा होता है यथा-

विजया विमुखो राजा अत्वै तदनुयाति यान्। विजि तस्मै हरन्त्यमे राजानः पृथवे यथा ३६। इति भागवत स्कंघ ४ अध्याय २३।

नव कुंकुम किं जलक मुख पङ्कज भूतयः । बिखिभिस्त्वरितं जग्मुः पृथु श्रोगयश्चलत्कुचाः १० । इति भागवत पूर्वाई स्कन्ध १० श्रम्याय ५। "विखि पूर्जोपहारे च" यह घातु भी है।

'अपना ही विल देवतों को देवो तो तुम्हाराभी नाम विल पड़ जायगा, जैसे कि राजा विल ने भगवान को अपने शरीर और सर्वस्व को विल दिया, इसी वास्ते उनका नाम बिल पड़ा, देवतावों को दूसरे के शरीर का विल देना महापाप है और विल देने वाला वा दिलाने वाला दोनों महामृद्ध हैं और महा नारकी हैं। भगवत औतारों और ऋषि मुनियों की वरावरी मांस खाने में करते हैं, परन्तु उनके कर्म की वरावरी नहीं करते उनमें तो वो भी शिक्त थी कि चाहें तो इन्द्र को नीचे गिरादें ( सहेंद्रस्तच को वित्रा नाग्नी किमिति पात्यते २० इति भागवत स्कन्ध १२ अध्याय ६। १६ से २४ श्लोक तक देखो ) भला तुममें भी वह शक्ति हैं।" आतम्भ राब्द का बार्थ-स्पर्श होता है यथाः-

श्रात्म पु॰ श्रा + लभ—घन् मुम। संस्पर्शे। वर्जियेदित्यनुषद्गे (इति तारानाथ तर्कवाचस्पति भट्टाचा-र्येण सङ्कालितम् वाचस्पत्य—दृहत्संस्कृताभिधानं चतुर्थ खएड संवत् १९३१ का छपा)।

"स्त्रीणाञ्च प्रेत्त्रणातम्भमुपवार्तं परस्य च इति मनुस्मृति श्रम्यायः २ श्लोक १७९."

यद्घाण भक्षो विहितः सुरायास्तथा पशोरालभनं न हिंसा । एवं व्यवायः प्रजया न रत्या इषं विशुद्धं न विदुः स्वधर्मम् १३ ।

येत्वनेवं विदो ऽसन्तः स्तव्धाः सद्भिषामिनः ।
पश्चन् दुर्यन्तिविस्तव्धाः प्रेत्य खाद्गन्ति ते च तान् १४)
इति भागवत स्कन्ध ११ अध्याय ५।

बाहुमसारपरिरम्भकरालकोरुनीचीस्तनालभननर्भ न-स्वाग्र पातै: । क्ष्वेल्या ऽवलोकहिसतैर्वज सुंदरीखाग्रुचम्भय-स्नतिपतिरमयांचकार ४६ ।

इति भागवत स्कन्ध १० पूर्वाई अध्याय २९।

भात्मा के ८ गुग यथाः—

अष्टावात्म गुणास्तिस्मन्प्रधानत्वेन संस्थिताः। दया सर्वेषु भृतेषु क्षान्ती रक्षा तुरस्य तु ८। अनस्या तथा लोके शौद्यमन्तर्वहिर्द्धिनाः। अनायासेषु कार्येषु माङ्गल्याचार सेवनम् ९। न च द्रव्येषु कार्पण्यमार्तेष्यार्जिनतेषु च। तथा ऽस्पृहा पर द्रव्ये पर स्त्रीषु च सर्वदा १०। अष्टाबात्म गुणाः प्रोक्ताः पुराणस्य तु कोविदैः। अयमेव कियायोगो ज्ञानयोगस्य साधकः ११।

श्रयाष्ट्रावातम गुणाः दया सर्वभृतेषु क्षान्तिरनस्या। शौचमनायासौ मंगलयकार्पएयमस्यहेति। × इति गौतसस्यति अध्याय ८।

× परन्तु श्रयोध्या श्रीसीतारामग्रेस के मालिक श्रीमान् बायू गिरिजादयालु जी (बुध-कवि) श्रात्मा के ११ गुगा बताते हैं यथा:—

दोहा - कम मन बच हिंसा तजै सब पर दया समान। आदर सब विधि सबन को सहै मान अपमान १। कर्णाश्रम के ८ गुग्ण यथाः— सत्यं शौचनिहसा च श्रनसूया तथा क्षमा । श्रानृशंस्यमकार्पएयं सन्तोषश्राष्ट्रमो गुणः ३२ । इति मार्कण्डेयपुराला श्रम्बाय २५।

परमदिप्ति का कारण और मुख देनेवाली बस्तु यथाः — विद्येका परमातृप्तिरहिंसैका सुखावहा २९ । इति महाभारत ख्योगपर्व अध्याय ३३।

धन कमाने की श्रक्त यथाः --यत्र धर्मस्तयैवार्धः २९ ।

इति महाभारत शान्तिपर्वे अध्याय ५९।

शौच शान्ति अनसूय अरु भच्य अलिप्सा सोय।
"बुव" अनआलस देह सुख अनायास सो होय २।
अहे आत्मा केर गुण ये ग्यारह सो जान।
"बुव" सो बुधवर जानते ज्ञानसानि गुणवान ३।

आपकी प्रसंशा में किञ्चित—

द्रोहा-कविवर "बुध" बुध खानि हैं विद्या में संपन्न। जिनकी तर्क तरङ्ग में रात्रू वह भये खिन्न १। (नागर) मुक्त होने की अक्तत यथाः—

आत्मनत्सर्व भूतेषु यश्रव्धियतः श्रुचिः । अमानी निर्भीमानः सर्वतो मुक्त एव सः ३ । इति महाभारत आश्यमेधिकपर्व अध्याय १९।

नोट—"मनुस्मृति अध्याय १२ इलोक १२५ देखो।"
मोत्त कैसे नहीं होती और कैसे होती है इस पर विचार यथाः—
न शब्दशास्त्रभिरतस्य मोक्षो न चैव रम्यावस्यय पियस्य।
न भोजनाच्छादन तत्परस्य न लोग चित्त ग्रहणे रतस्य ६।
एकान्त शोलस्य दृढ़ व्रतस्य मोक्षो भवेत्नीति निवर्तकस्य।
श्रष्ट्यात्म योगै करतस्य सम्यङ मोक्षो भवेत्नित्यमिहस्यकस्य।
इति आपस्तम्बस्मृति अध्याय १०।

बहा बनने की अक्षल यथाः—
सर्व भूतेषु चा ऽऽ त्मानं सर्व भूतानि चा ऽऽ त्मिनि ।
यदा पश्यित भूतात्मा ब्रह्म संपद्यते तदा २२।
इति ब्रह्मपुराण अध्याय १२८।

अयात्म व्यतिरेकेण द्वितीयं नैव पश्यन्ति।

ब्रह्मभूतः स एव इ दक्ष पक्ष उदाहृतः १२ । क्ष इति दक्तस्मृति अध्याय ७ । नैव चिन्त्यं न चाचिन्त्यं न चिन्त्यं चिन्त्यमेव च । पक्षपात विनिर्मुक्तं ब्रह्म सम्पद्यते ध्रुवम् ६ । इति त्रिपुरातापिन्युपनिषद्, उपनिषद् ५ और ब्रह्मविंदू उपनिषद् श्रुति ६ ।

यदा सर्वाणि भूतानि स्वात्मन्येव हो पश्यति । सर्व भूतेषु चात्मानं ब्रह्म सम्पद्यते तदा ७९ । इति श्रन्नपूर्णोपनिषद् श्रम्याय ५। नोट-गीता १३ । ३० में भी ब्रह्म बनने की श्रकत लिखी है।

जो मनुष्य प्राणियोंको श्रपने सरीखा श्रौर दूसरे के द्रव्य को मही के ढेले के सरीखा देखता है वही देखता है ! श्रौर सब

क्ष वेद शास्त्रार्थतत्वक्षो यत्र तत्राश्रमेवसन् । इहैव लोके ति-ष्टन्स ब्रह्म भूयाय कल्पते १०२ इति मनुस्मृति अध्याय १२। अर्थ—वेदशास्त्र का अर्थ और तत्व को जानने वाला पुरुष किसी आश्रम में निवास करें इसी लोक में ब्रह्मत्व लाभ करता है १०२।

श्रन्धे हैं यथाः—

श्चात्मवत्सर्व भूतानि पर द्रव्याणि लोष्टवत् । स्वभावादेव न भयाद्यः पश्यति स पश्यति ३८। इति श्वन्नपूर्णोपनिषद् श्रम्याय १।

नोट-५४ पृष्ठ का ३३७ श्लोक भी देखो।

जो जीवों को दुख देते हैं वह ब्रह्म को ही दुख देते हैं क्योंकि ब्रह्म ही जीवरूप से माया का साथ करके पैदा हुआ है। जैसे पित वीर्यरूप से भार्यों के शरीर में प्रवेश करके पुत्ररूप से जन्मता है, इसी हेतु भार्यों का भी जाया नाम होताहै क्योंकि स्त्री से पुरुष ने पुनरवार जन्म लिया यथा:—

पतिर्भार्या संप्रविष्ट्य गर्भी भृत्वेह जायते । जायायास्तद्धि जायात्वं यदस्यां जायते पुनः ८। . इति मनुस्मृति अध्याय ९।

सुकति पुरुष यथाः—

न नृशंसा न पिशुना न कृतन्ना न मानिनः।
सतायस्तपः स्थितौः शूरा द्यावंतः समापरः ७।
इति पद्मपुराण सूमिखरुड अध्याय ९५।

देवलोक जाने की खकलः—
धर्म भनस्य सततं त्यज भूत हिंसा,
धर्म भनस्य सततं त्यज भूत हिंसा,
सेवस्व साधु पुरुषान् जिहि काम शत्रुम् ।
अन्यस्य दोष गुगा कीर्तनमासु हित्वा,
सत्यं वदार्चय हिंदे त्रज देवलोकम् १६५।
इति पद्मपुरागा उत्तरखण्ड अध्याय १२०।

धर्म के १० शत्रु यथाः-

श्रालस १ शरम २ दीघ्रसूत्रता ३ श्रासावधानता ४ श्रामान्यार ५ वेविचार ६ मूर्खता ७ मांस मछली लहसुन प्याज खाने-वाले, नशावाज श्रीर भूठ बोलनेवालों (वकीलादि) की संगत ८ शरीर का रोग ९ मानसीरोग १०।

धर्म के १४ मित्र यथाः -

उद्योग १ विद्या २ निरालस ३ सावधान ४ विचार ५ सजनों की संगति ६ पवित्रता ७ शुद्ध अन्न वा शुद्ध फलफूल का भोजन ८ एकान्तवास ९ सत्य बोलना १० किसी जीव को दुख देने का विचार मनमें न उठाना ११ आरोग्यता १२ आचार विचार १३ दिन निकलनेसे पहिले भगवत आराधन १४। दोहा—गुरुघर शक्कर × तीर पर गाड़ स्वारा धाम। जन्मभूमि मम सिहपुर जह श्रीपति का धाम १।

🗴 शकर नदी।

नरसिंहपुर इन कर जिला मध्यप्रदेश प्रदेश । गोलाप्रव जाति में जन्म भयो है लेश २। जानकीवल्लभदास श्रह नागर जानहुँ नाम। चित्रकृट में बैठ के पुस्तक लिखी ललाम ३। त्रेपन शुचि निज वयस में प्रन्थ सहित परमान। नागर विरच्यो नागरिक बुधजन के कल्यान ४। ब्रह्म योग निधि चंद्रमा (१९८१) समा विक्रमी येह । 🛊 फागुन पूनो को लिखा देत अहिंसा नेह ५। यह बिलदान निषेध जो पढ़ि हैं सहित समेह। तेहि के घर सुख संपदा नित बरसै जिमि मेह ६। सोरठा-प्रनथकार नामादि, प्राम जिला दोहा तले। अन्तर प्रति पद आदि, एक एक लेवहु सुबुध १। दोहा—जागहु हिंसक तनक तुम, नहीं नी द में सीय। कीजे तनक विचार मन, बहुत श्रशुचि का होय २। लघु बकरी का बाल तज, भली तजो पाठीन। दान जीव दो दुहुन को, सब बिधि ये अति दीन ३।

श्रङ्केषु शून्य विन्यासाद्वृद्धिः स्यानु दशाधिका ।
 तस्माञ्ज्ञेया विशेषेण श्रङ्कानां वामतो गतिः ४८ ।
 इति समयोचितपद्यमानिकास्थः श्रकारः ।

सिंह बने गज को डरत, हनत बकरिया बात । पुण्य नारा कीन्हें सकल, रहें काल के गाल ४। जिथर जावगे तिथर ही, लागैगी तन आगं। नहीं खान को मिलहिगी, रजगर वथुवा साग ५। सिंघु दया के मत बनों, हरो न पर की पीर। पुरुष करहु न ?? पाप तज्ञ, रहनि रहो यहि धीर ६।

नाम संकीर्तनं यस्य सर्वे पाप प्रणासनम् । पणामो दुःख शमनस्तं नमामि इरिं परम् २३। इति श्रीमद्भागवत स्कन्ध १२ अध्याय १३।

इतिश्री, श्रीवेष्णव, परमहंस जानकीषञ्जभदास (नागर-कवि) कृत-समाहृति बलिदान निषेध समाप्तः।

> हरि: ॐ तत्सद्रामेति । श्रीहिंसकार्पणमस्तु । फाल्युन पूर्णिमा संस्वत् १९८१ विकसीय।

भद्रभ्यात्।

## आज तक जो नवीन पुस्तकें मैंने वनाई और दीकां की हैं उनके नाम।

+१ गोलापूर्वोत्पत्तिमार्तण्ड । +२ जानकीबल्लभवाराखड़ी । ३ मुद्रा मार्तण्ड । ४ वेदान्त कल्लोल । ५ जगत प्रवोध । + ६ राममन्त्रार्थ। 🛧 🕽 रामविषय । 🕂८ ईश्वरवालवोध । ६ मत्स्यपुरासांतर्गत नमेंद्र माहात्म्य भाषाटीका । १० नमंदाष्टक भाषाटीका । +११ हरिहार नाहात्म्य । + १२ प्रयागमाहातम्य ।१३ कुंभ माला । +१४ सोमप्रती अमावस माहात्म्य । १५ एकादशी माहात्म्य । १६ बद्शीनाथ. माहातम्य । १७ बद्रीनाथाष्टक । १८ खटपटपंजरिका । १६ अर्हिलाआदर्श। २० चूत [ जुवा] निषेत्र । २१ कन्या वैश्वना निषेध। २२ नारीधर्म । २३ धर्मकुसुम (पुत्रशिक्षा)। २४ नरावक + २५ तपपंचक । २६ दानादर्श । २७ वाममैथिल परिचय । २८ श्वंगार प्रवृत्ति नाटक। २६ रामनाम मणि दीप व्याख्या। ३० गुरू शिष्य विवरण चंद्रिका । ३१ तुलसीकृत रामायण विषय सुचौ। ३२ निर्माल्यबोध । + ३३ वलिदाननिषेध : + ३४ देबीवलिपासण्ड । ३५ बनिया । ३६ श्रीसीताराम उपासना रहस्य । ३७ रेवाष्ट्रक । ३८ दिसा तर्कावली।

मार्गशिषेकृत्ण१३ ) प्रत्थकार— सम्बद्ध् १९६२ वि॰ ) परमहंस-जानकीवल्लभदास (नागर-कवि)

चित्रकृट, जिला बांदा (यू०पी०)

